

मीरा

: महाकाव्य .



परमेश्वर द्वि-प



हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय

धाराणगी-१

द्वितीय संस्करण

११०

अगस्त १९६६



मूल्य ३ रु ५० न प

हिन्दी प्रचारक पाँ बॉक्स न ७०	प्रकाशक पुस्तकालय गिणपमापन बाराबत्ती-१	पत्र राष्ट्रीय प्रस बाग बगियार मिह बाराबत्ती-१
----------------------------------	---	---

सादर समर्पित—

अपनी जननी को

जिगगी गोपी में

मीरा के गीत सुने ।



भूमिका

श्री टिरेब शरा प्रणीत 'मीरा' महानाट्य मन पाठ्यपिपि में पढ़ा । प्रसिद्ध एत्रिभूमिक रमणी मीरा का आख्यान लेकर यह काण्ड रचना की गयी है । कवि ने राजस्थान की तन्वानीन सामाजिक रीतियाँ रूढ़ियाँ और प्रथाओं की पुच्छ-भूमि पर मीरा का पारिवारिक जीवन चित्रित किया है और उस उन समस्त अंतराया व बीच एक मनगिनी नारी का व्यक्तिव प्रकृत किया है ।

कवि ने गिरनाया है कि मीरा व हृदय में भक्ति का बीज बाल्यावस्था में ही बोधिया गया है । पशुम की एक लड़की व विवाह व अवसर पर मीरा का बनाया गया था कि उसका पति गिरधर नागर है जो समुदा-भूत पर अन्त मनास्य मीनाएँ किया करता था वही जीवनमयी शशा । मीरा ने अपनी माँ द्वारा बोधी गयी एक भात का मूत्र विनाम न मान लिया और वह बचपन में ही इन्हीं बाल्यावस्था में पवन लगी ।

उन जिना राजस्थानी परिवार में बच्चा का जन्म सना एक अज्ञान रचना समझी जाती थी । बहुत-सा ता जीवन भर उपास और विष्णुनाम घण घण कर प्रार्थना लेती था । बच्चा का विवाह एक दुपट घटना थी जो गार परिवार का जीवन भर चिन्तित रखा करती थी । विवाह में पति दव का मनमाना सम्बन्ध रखा करता था । मारी व्यसथा नारी व निरा त्रामहारिणी थी ।

मीरा व बचपन में ही भक्ति व सम्बन्ध टुट हा रूँ व बह प्रमत्त अन्तमग और माधमिन्त हाती जा रही थी । उम बचन अपन गिरधर गागाड को चिन्ता थी । उही व प्यार में वह सब कुछ, मारी सामाजिक विदम्बनाएँ भून लगी थी । ममात्र और उनका समस्त भना-बरी रीतियाँ व उम कुछ भी मना-मना न था । वह ममात्र की पारो आर पनी हूँ विधीमिता व ऊपर उा रही था । उमन अन्त साधन का मना मन्त्र बना लिया था—जना ही माह बना लिया था ।

इसी समय मीरा व विष्णु की वर्षा लल्ल लगी । जिना अन्तमग चिन्तित और घण घ व विन्नु बर उगाएँ व हर की मात्र कर ११ घे । मीरा का माँ अन्त पति के हम अन्तमग व दुःखी थी और ममात्र की उम उर्ध्वत पर लक्षीर विचार कर रही थी जो भर और मारी व इतना विरम विष्णु करता है । लगी बीच मीरा की मांग का भी मारी-मन्त्र हा लला और मारी उन्त व मन्त्र कर का शतन व विर अन्ती रूँ लगी ।

भाई जयमल और बाधा राव दूदा जी के साहचर्य में धालिका मीराँ अब यही होन लगी । मीराँ जयमल का अपन प्रभाव में ल आयी थी । उसकी बठोर युक्तिया का बहुत कुछ गमन कर दिया था । राव दूदाजी अतिगप बढ हा चुके थ । मीराँ उनके जीवन-अनुभव से नई सीख ले रही थी । साथ ही वह अपनी नवीन जिज्ञासाएँ भी उनक समझ रखती थी जा अतिगप असाधारण हानी थी और जिनम दूदाजी समलून हो उठने थ ।

षतुप सग में तरणी मीराँ का सौल्य-वर्णन और उमकी मगाई की षवा है । यवाकस्या के आरम में यक्तियाँ और मनाभावनाएँ त्रिम त्रम ल परिवर्तित होती हैं कवि न उमका विवरण दिया है । मक्तिया का मीराँ क साथ ध्यग्य विनाप करना और षव-गुनम मनारजना म उमका मखार करना लिखाया गया है । यद्यपि मीराँ पर नई उद्य का स्वाभारित प्रभाव पढ रहा था पर वह अरन बढेमुन गिरिधर-उपागना क आरग का मन न पायी थी ।

पौवडे सग म मार्ग का समुगन विगर् का वर्णन है । यही षवा करु में गनम्यान पी अनायी और अनुपम शाभा और उनाम का विवर भी अर्चित दिया गया है । इन दाना प्रमगा में कवि की भावना गुत्र गमी है और उमन इन्हें बडा राबक बना दिया है । यहाँ फिर मीराँ का सौल्य-वर्णन और उमक पनि मिजन का दुग्य लिखाया गया है ।

गारीरिठ आरपण और षागना के प्रवाह में जीवन क उगत लय और मकन्य मुन न जाण, यह समस्या कवि न दूर सग में उठापी है । षर्पा क प्रपम प्नाउन क पचात गरदु की मयमित दृग आनी ही चाहिग किन्तु मीराँ के पनिब म अवगर पर समुन लो बठो है और बहक जान ह । वे बहून समय तर षम्भे रहने है । अर्गुलि उमाग लिमात्मर षेष्णा उन पर अधिकार कर लनी है । कवि के गला में वे भीतिरता क षकर में पढ जान ह ।

यहाँ म काव्य में नया लिबाव प्रारम हाता है । एक आर मीराँ है दूगगी आर उमके अमयमी पनि है । इन विगेष और तनाव में अलिम विजय मीराँ को हानी है परन्तु इगक कुछ ही समय पदबात् मीराँ क पनिबेव संमार ग षन बमने है । गग पनि की अविधान मवा बन हुए मीराँ उनक प्रपाण मे अतिगप विचरित हो जाती है । हमरे और ध्यारहरे मगी में उमक विनाप-नीत और उमकी वियोग-गा का मामिक विवरण दिया गया है । इन्ही मगी म मीराँ की जीवन निष्ठा और उमक आरम मवा-अन षरण बन का उत्सम है । उमका गवा-शत्र षराषर तह प्रमार पा गया है । दाम-गमित दीन-दुगी विगान मरदूर मभी उमके सेवा-बाप मे उगहन होते है ।

बारहवे सग में शरम्यान की मभूमि में मवापुन का गिबन कगी मीराँ की जीवन-षर्पा लिखायी गयी है । एक मामिक षरता का मयोग पाकर यर गी षमक उग है । उग समय मरदूतान की प्रवा थी कि कुँ पर जाकर कोर अन्वय पानी मीरी सीब गरता था । पानी गारता लो दूर उग विगी कुलीन नर-नारी मे कुँ पर पानी मांगना भी निषिड था ।

एक अल्पत्र मग्भूमि में चलता-चलता घर गया था। दादर हा बरौ थी। उम प्यास लग रही थी। पानी की खोज में दूर-दूर भटकता हुआ वह एक कुएँ के समीप पहुँचा जहाँ एक पत्थरी पानी भर रही थी बिन्दु उम वृष्णराय अल्पत्र का कुएँ पर पहुँच कर भी प्यास ही रहता पड़ा। दुबली न उम प्रधानगार पानी पना स्वीकार न किया। वह पानी के विषय सत्यता-नदपता मृत्यु के मग में जान गया।

दूसी समय भक्ति प्रगति जन-महा के माग पर चलती चलती मीरा भी उगी म्यान पर जा पहुँची और उम मरदन हा मानस-रोग को मुधुया करने लगी। कुछ हा घर में यह प्राणा स्वयं हुआ। चलता आता ही वह मारी के चरण पर गिर पया।

एक भयंकर घर बहिन मीरा के मग म समस्तचित्त निराशावाक्य कहताए ह।

पयासा मग में मीरा का विरज्जान करना और उममे निराशा बर रहना निराहार काव्य को ममानि की गयी है।

कारण को समु-याचना मे यह स्पष्ट भासित हाता है कि 'द्विरप जी न मीरा मगराव्य में जीवन का विस्तृत भूमिदा का मग करने को चेष्टा का है। रात्र स्थान को तत्कालीन समात्र-व्यसथा को अन्वी क्षयर पुन्यर पढ़ कर मिय जानी है। मीरा के पागव के मग्भूमि का त्रम विहाय मनावर्तानिर भूमिदा पर प्रगतिन किया गया है किमन उमकी चरित-मष्टि म बान कुछ मामिचना आ गयी है।

संगरवातीन श्रीदा-कौतुक भाग-बहन का गोपण भाग-रिता को अनिराया और बिना बड दुःखी का वागव्य मग्भूमि का मनाविनो ताएव्य की मनोमगा बिगाई का अवसा मिनन का औचुक्क गगगग नगागग आनि के चलता के मग उराम पारना और प्रगान्त निरयन समात्र की दाग निरि-यगा और ध्यति की अगन कमप्यना आनि के दुःख भी बड गुल्पर दुग म निराय म्य है।

काव्य में आर हुए मीरा का मीरा उन्नतनीय है बिन्दु मीरा के मीरा म भी अति बरि का गुल्पर प्रकृति-बन है। बिगाईकर रात्रस्थान की बरौ का बरान आगतिक आशा मे बिना है। बरौ इन पाता का एक-एक उगाएव म गता है —

एक मीरा-वरी —

एक में भक्ति मग्भूमि
मग-रिगाई के ब मयु मग

आज हृदय से दूर निराशा
जीवन की यह स्वर्णिम जय है ।
आज विटप में गिब विमलजय है ।

एक प्राकृतिक चित्र —

हंस रहा था शस्य अंतर में निय अनुराग
अन्न का सुकुमार जीवन खतता था फाग
मुक्त पत्तों पर तुम्हिन क बण रहे थे सेम
बाल रवि की आभा का था अयोविष मेम ।

०

पशिया क रव अमरपुर की मुक्त अंतर
धुष्य पावस गरित काभी कनिज गरित धार
गूजता था किमी विरही क हृष्य का प्रान्त
गान्त जिमकी रागिनी पर झूम जाता स्वान्त ।

रूप-वर्णन के स्थान भी अच्छे हैं यद्यपि वे आवश्यकता से अधिक उत्तरेक हो गये हैं । उनसे अधिक प्रभावगामी व चित्र हैं जिनमें दग-काल की स्थिति का यथापराधी उत्सव है किन्तु उनमें भी अधिक मार्मिक के उन्माद-युग वाक्य हैं जो किमी की आर स या सीरी क मुक्त से कह जाकर काव्यगत जीवन-गान का निर्माण करते हैं —

उड़ उड़ कर नभ का छ डाल थाह रहा नर
एक पक्ष सन्तुलन-हीन गिरता जाता पर ।
चिर भी नर का भग्न भावना नहीं शांती
बाटर में निरपाय बढ नागी पुकारती ।
मुष्य मरी रह गया आज नागी के स्वर का
ज्ञान छिद्र हा गया उन निज शक्ति प्रगर का !
भग्न हुई उर-श्रीगा क तारों में चन्दन
विषय का कुडनिसा क पागा में चन्दन ।

एसी ही नाबोसत्रक पशिया में मीरा 'महाशय्य' का आत्मा खोल उठी है । मृत शय्य काय में नर गूण और प्रकृति का दान हुए । रचना नि नय ही अयम श्रेणी की है ।

अप्यग हिाडी विभाग }
गापर विवविषातय }

न-दहुलारे वाजपेयी

प्रणोता का पृष्ठ

मीरा महाराज्य में मन मीरा के जीवन का ही निरूपण है। यह सत्य है कि जागृक गामन मार्ग का भक्ति-स्वरूप ही है पर कवि के समय मार्ग बहिष्कारित और हाथी नी है। प्रथम मग म मायात्मक बहिष्कार मार्ग का उमकी मां ने त्रिम गिरिधर नागर का आर दृष्टि किया उगी का अय गरी में उमन स्वप्न में मां के मरण पर वामन के रूप में दागरी के नाम जिजाभा के रूप में प्रणय पर पति के रूप में और कथन पर आश्रय के रूप में तथा जन-मायात्मक का आभा के स्वरूप में ग्रहण किया है—यही तम विराग प्रसन्न वाच्य का प्रयोग रहा है। जीवन का स्वाभाविक प्रवृत्ति प्राप्त उपायम ध्यव्य-विनाय का भी विद्युत् मही किया गया है। गायन वादन नृतन और वाद्य प्रणयन आदि म प्रवीण हान के पाठन मार्ग में ही मायता में विनयनी भा है। वह माव-मग्य कल्पनागत रम सिद्ध कामल बना-निमाना हा महा अरिनु जन जन जावन दात्री अनुमूनि प्रवणा मानवी भी है। वह वाच्य और बना के जानन का रम गिरिधर करन वाली पुन्यनाया मग-मन्त्रादिनी ता है हा माय ही अपन उदास बन म बगारा हिम-बीषा और पायाग का अपन जीवन रम म मान कर बाय म जान वाली गुण-भीषा भी है। काश्यप स्वयं म भा अधिभ भात्र का मायी अगतिन अनापिनिना विपशाभा का जावन भाववन पन बना हूँ है। मीरानामन निधि गवता भक्ति के चक्र में न पदकर मीरा के जीवन का ही निरूपण है। उा मग-विनाय में उनका महत्त्वनाय गामा स्वाय माय में कही गुणभ नगी। जनधति में रविनाम का मार्ग का न्य हाता लमिद्ध है इगता वाच्य में मार्ग के दाग मुनिव अदूत का गडा म्वा-विदि है। मीरा मपागन नगी भी है म्वादिन पुन-मग्य अत्र-मग्य जगद्वार के नि- में भी उमकी अर्चक नगी है। कवि और मीरा म गवामा हा न के कारण जनक उपाय कवि के मग म भी वह हा गहन ॥ यह जान मना भावयत है। मन गुणभ उपायना म मन मार्ग का एक गुणयत प्रथमा म दावन का वाच्य का है। वाच्य में अनी हूँ विन विगित विदित मार्ग के अदि मने मन-परा का अर्थमयक के मग ॥ गगा मग विदित है—

आज हृदय से दूर निराशा
जीवन की यह स्वर्णिम धूप है ।
आज विटप में गिव किमलय है ।

एक प्राकृतिक चित्र —

हैम रत्न था गम्य अक्षर में निय अनराग
अन्न का मुकुमार यौवन मलता था फाग
मुक्त पत्तों पर तुन्दि क कण रू य सत
बाल रवि की अग्रा का था अनौतिक मेत ।

पशिया क रव अमरपुर का मुक्ता महार
क्षय पावम मरित का-मा कलित गरित्र धार
गुजता था किमी विरता क हृष्य का प्रान्त
गान्ध त्रिमयी रागिनी पर झम जाता म्वान्त ।

रूप-रंगन के म्यत्र भा अच्छ र यद्यपि व आवश्यकता स अधिक उत्तम
हा गय है । उनसे अधिक प्रभावशाली व चित्र है त्रिमयें दग-वाम का स्थिति
का यथायवानी उत्तम है किन्तु उनमें भी अधिक मार्मिक व उन्माद-भूग वाक्य
हैं जो किमी की आर म या मारी क मन्त्र म कट जाकर बाध्यगत जीवन-दण्ड का
निर्माण करते हैं —

उड़ उड़ कर नभ का छ डाल चान रहा मर
एक पग सन्तुलन-हीन पिग्ना जाता पर ।
फिर भा नर की भक्त भावना नहीं हासनी
कौतर में निरपय बद्ध नागे पुवारता ।
मृष्य नहा रह गया आज नागी क स्वर का
गान छिन्न हा गया उन निज शक्ति प्रखर का !
मन हुई उन्वीणा क तारों में श्रुत
विषय का कुडनिया क पाग में चन्द ।

ऐसी ही नावातेत्रक पशिया में 'भीरी' महाकाव्य का आमा बान उठी
है । मुझे इस काव्य में नर्म मूय और प्रतिभा क ज्ञान हुए । रचना निःशय ही
प्रथम श्रेणी की है ।

अभ्यंग हिरी विमान }
मागर विभवविद्याय }

नन्ददुलारे वाजपेयी

प्रणेता का पृष्ठ

वीरों महावाप्य म मन मार्ग क जीवन वा ही निवृत्त से दया है । य
 सन है वि साया क मामन मार्ग वा नक्ति-स्वरूप ही है पर कवि क ममन मार्ग
 वादिका विगारी और लक्ष्मी भी है । प्रथम मग म साधारण वादिका मार्ग
 वा उमरी मा न जिम गिरिधर नागर वा आर इवित किया उमी वा अर गयी
 में उमन स्वान में मा क मरण पर क्यन क रूप म लक्ष्मी क पाम जिगामा क
 रूप में प्रणय पर पति क रूप में और वधव्य पर आश्रय क रूप म तथा जन-साधारण
 की आमा क स्वरूप में प्रणय किया है—यही प्रम-विराम प्रमन वाप्य वा प्रयाग
 रण है । जीवन वा स्वाभाविक प्रवृत्ति हाम उपागम व्यग्य-रिना वा भी
 विभूता नहीं किया गया है । मायन वाप्य नवन आर वाप्य प्रणयन आी म
 प्रयाग हान क कारण मार्ग मगी मायना म विवहरी भा है । व भाव मय
 कल्पनागीत रम मिष्ट वामन कला-निमाता हा नग मतिनु जन जन जीवन
 दायी अनुभूति प्रवणा मानवी भी है । वर वाप्य और कता क वानन वा रम
 गिञ्चित करन वायी पुन्यतोया मन्-मन्वादिनी ता है हा माय ही अरन उपाग
 वेग म कगारा हिम-जीवा और पायाण वा अरन जीवन म्य में मान कर बना
 ल जान वायी गुण-मभीग भी है । वाप्यमय स्वयं म भी अधिह मात्र वा
 माप्य अगतिन अनापिनिया विषवाभा वा जावन प्रावहन पन बना हूँ है ।
 नीतिगत मन निधि गवाग अरि क चर में न पदहर मीर्ग क जावन वा ही निवृत्त
 म दणन वा प्रयन किया है । उम मन्वादि-नाच म उमका अह्यनाय गोमा
 त्याग साह में कर्ी मुत्तम नगी । जतर्दि में रदिगय वा मीर्ग वा रण हाता
 प्रमिष्ट है इगतिन वाप्य में मीर्ग क नग मरिच अरुण वा मया स्वाभारिण
 है । मीर्ग मभाषण वागी भी है इगतिन गुण-गुण अम-मन्वा उरुत्राण क
 लिए में भी उगरी अरि क रगी है । कवि और मीर्ग म लक्ष्मी हात क कारण
 जनक उगार कवि क मग म भी कर वा मन्वा पर जान मना भावपत्र है ।
 अरन वाप्य उरुत्राण म मन मार्ग का एक मुत्तमकर प्रमिष्टा में जावन क कला
 की है । वाप्य म प्रणी हूँ नि-न-रिचित लक्ष्मी मार्ग क प्रदि मर मनामाका
 वा अर्थ-व्यक्त कर मन्वा । हाता मग विवहरी है—

मीराँ • महाकाव्य :

•

प्रथम सर्ग

★

आंगन में रज-मनुज भू पर
बालिका एक सपु-नपु मुन्दर
शुभपाप मौन निरपदिन म्वर
ज्यों बीया

सापट का ज्यों आरापिन मन
ज्यों हरि का साहाजर पिन्नन
एवं हीप-शिखा भी नग मीड़न
तर्जाना

मग्ने हर मन्दा मुगमन्त्र
अपु धारपा में नूपुर धवन
इकहर मिमध तम पर धवन
धा माना

कदर-कृतिग प्रनिरज जय हर
य रद बना मिहो का पर
ल्प माध जिन विहारी धार
ज्यों हीना

भीरी

साकार हुआ सुन्दर चिन्तन
घतुलाकार बन गया सदन
जिसमें केन्द्रित था उसका मन
आरुहादित

कितना सुन्दर था यह लघु घर
यह नहीं कहा जा सजता पर
सब कुछ भूली उमरो पाकर
वह बाजा

वह भाव भरा ले अंतगल
करती थी प्रतिपल दृश्य भाल
ऊपर रवि भीतर तिमिर झाल
सगु फित

जाने क्यों फिर उसन पग घर
कर दिया खदश अपना घर ?
खोगइ नोद में फिर पीछर
ज्यों हाला

लटी थी भू के अचल में
ज्यों मीन शान्त नीरव जल में
कुछ भाव न थ भ्रतस्वल में
निर्लिप्ता

भीरों ! भीरों ! के सुदु सुदु स्वर
से सहसा गुँज पड़ा वह घर
पर मिला नहीं कोई उत्तर
धिर परिचित

स्वर से होठा था यही भान
ह मातृ-हृदय का सजल गान
जिसमें मनमाना मुता यान
प्रतिबिम्बित

कर हतस्ततः मा चन्दयय
भाई चाँगन में ज्या तदय
दमा तो का तन पर हउ-कय
का ताना

बाने की गौरी म्यर-लहरी
इतन में निछ निछ गहरा
पर यह गाहू थी ज्या बहरा
मद धुँधिल

दग्ने लगी मा जी भर कर
नही कब्रिहा सी यह सुन्दर
सु सु मौर्या का सु सु म्यर
धन मकृग

मदमरा ज्या ही पुका शयन
सस्मृति का करन दुण धयन
मधम निगरन रह नयन
धग्गानन

कर फैलाये धागुर मा ने
खने गादा में धनजाने
समपाह मागू - कड पाने
मैगगिक

बारी मा उमरा कर सुम्बन
हू धाय बना क्या का उमन ?
भर लिपा मभी मिही न तन
कान बना ?

त्रिदा का का परि धन रंग
ता गुग्ग मदे य धनग
धरगा पर पगा क्या उर्मन
जा मरी ?

मीरा

अधिराज बाजा बज रहा निकर
 आँठे बरात तुम चलो भूपर
 बालों की बिखर रही ये लट
 परिवर्तित

सप पडुँघ गये मडप नीचे
 तू सोती रही मयन मीचे
 भर लिपु अलक सौरभ मीचे
 श्री-भासित

श्रीदा-कटुक कर-पुतलियाँ
 दासी, घायें हँममुख अलियाँ
 पर तुमको प्रिय रज धी गलियाँ
 मल-पकिल

अभिनव सुन्दर मडप छीपित
 बक के नव पखों सा विस्तत
 या घर अभिनव-गृह सा सजित
 प्रिय सुखकर

या जन-सकुल बाहर—भीतर
 निज कमों में रठ नारी भर
 ये। खगे हुए प्रतिपन्न पथ पर
 हग मीरव

बाजे का गुँज रहा था स्वरा
 बलते आते थे चण चण कर
 घर क ही निकर बराती घर
 स्मित-शामन

गाती थी गायन किशरियाँ
 सुन्दर सुरेन्द्र की सी परियाँ
 गुञ्जित गहरी अत-पुरियाँ
 दीपोज्ज्वल

प्रथम सर्ग

स्वागत-गायन गातीं सन्निधौ
पथ पर धौं पिछा रही खैरियाँ
रस में हुयी मन की पैरियाँ
मधु-मिषित

य मूल रहे चिन्तक चिन्तन
गायन-स्वर में दृये कर जन
कामिनिधौ का तरंग यौवन
चाकरार

मीराँ क घर के बहुत पास
ही यह पिछाह बल्लाम हाम
था कलिका का मधुमय विकार्य
अनुरजन

उररही मारम की दिम्ब सहर
सै गिरना आगया था यह पर
बाधन में बैधर भी मधुकर
आनदित

मीराँ का लहर यह तिस पथ
पहुँची घर में अदिलव थरथ
पर पून रहा था पर-भारथ
पथानिक

यह दर हुई क्या क्या बात ?
तुम ना सबका द लई माथ
हम दास दास तुम पाग पाग
मायावति ।

यौं बाग-माथ हुआ पथ भर
मीराँ की मा म सब शह कर
जन्म-स्वर तीव्रित किया प्रकर
निय पथम

मीराँ

अधलोकन में भूली वाला
घर भरा हुआ मंडपवाला
भारता की भदती थी माखा
करयामय

सूना घर आज हुआ अपना
मस्तक पादित उर भी भारी
यह पुत्री प्राणों से प्यारी
तिल तिल खय खय कर बड़ी हुई
जब बड़ी हुई तो बेचारी
अनजाने गाँव चली जिसका
कोई न वहाँ परिचित अपना
सूना घर आज हुआ अपना
यह हरय देखती थी अपलक
मीराँ सुधसुध विस्मृता अथक
नव वधू मौन था नतमस्तक
लजित वर

सहसा फिर बाल-सुलभ-स्वभाव
से विस्मित उर में लिये घाव
बोली मा मे य भरे भाव
आनदित

हूँ कौन, कहाँ मा ! मेरा वर ?
मैं किसकी दुलहिन यनी घमर ?
यों सुन आया मा का जी भर
रोमाञ्चित

जिस गायन को गाते-गाते
मीराँ पुत्री थी इस नाते
सोधी थी जाने को याते
उर-द्रावक

प्रथम सर्ग

प्रतिष्वनित हुआ यह ही विगन
जननी का मन बन कर उन्मन
विस्फारित करने लगा नयन
सुनापन

महिलाओं न उपहास दाम
था किया, किन्तु मा दाद ग्याम
गंभीर हुए था कर उदास
अनिरजित

जिम नारी क हा यत्र मुला
कवस यह क्या रे ! मक पता
कर कहीं चिरतन कीन पता ?
भायुवना

धिर सहसा ईसग हुए मधुर
द दिया स्वरा में यह उभर
छरा पति ला मखर मागर
रा-पालक

मों मे साधा था चय प्रतिषण
दृष्ट न कहा दुहिता का मन
इमनिध बनाया कर गाधन
सधैरपर

पर यह धामा लतीन हुए
निज गई उम अनुभूति गई
यद मटनागर गापाल-भयी
धिर धिनिज

दिन गया निरा भी गई धान
राय मध में भी प्रत्य-नीन
पर उगवा निरपस प्रत्य-नीन
परिवर्द्धन

प्रथम सर्ग

य शुनत रास-विलास-खान
 आइ मारी जय यम-हीन
 छमित पुकारती उदें दीन
 दयनीया

धो दल उसका बड़ा धीर
 दुर्बाधन की लज मधुर खार
 कर लिया बिदुर का पान मीर
 प्रेमामित

रदन मागर धकृ घाम
 हाथ क हाथ सदा ललाम
 साथत भग क सभी धाम
 पल प्रतिपल

बट कर यां ल थड़ा छपार
 मन हा मन में यह बार-बार
 मानविक रिमल वजापचार
 थी करती

तीनां शोनों के सद्य माध !
 दुर्धा पर रगना अभय हाथ
 यह कामल बलि नग-नपल माध
 कर-बड़ा

बरती जाता थी करलाकन
 मीरा विगिनत वह कथा-श्रयण
 लक्ष्मी हुधा जाता या मन
 गिननमय

विगिन मरान् विगिन सुन्दर
 मरिगिरा लपन क मगर !
 उगड़ी दुलहिन क भर कर
 मरिगिरा

मीरा

सोते चिन्तन जगते चिन्तन
नटनागर में उलका था मन
जग से उदास, घर से उन्मत्त
अन्तर्गत

अस्पष्ट रूप-रेखा सुन्दर
मयनों के आगे रह रह कर
देता थी भावों से भर भर
अतस्तल

यह एक दिवस की रही यात
लेटी थी मा के साथ साथ
चन्द्रिकामयी थी शरद् रात
सुन्दरतम

मा गोपालक नग्वर नागर
मे कान कहाँ है इनका घर ?
तू कहती रही न मेरे घर
शिव शारवत !

मा के विस्मय का था न पार
अतर्कन में गहरा दुःखार
उसके भावुक मन का विचार
यालाक्षित

घह वाली यह जा शुद्ध रात
ह दीप्ति रही ज्या मय प्रभात
जब बढ़ता रहती मलय-वात
सुगन्धक

कालिन्दी के अभिराम कूल
सुध-सुध जाती गापियाँ भूल
मय शनै शनै क्षिप कर दुःख
एकत्रित

ये सुनत रास-विलास-खान
 ब्याह मारी जब पद्म-हीन
 छत्रिन पुकारनी उदें दान
 दयनीया

छो देन उमका बग धीर
 दुपाधन का छत्र मपुर सार
 कर लिपा विदुर का पान नार
 प्रमादित

रहत नागर धीरु धाम
 राधा के माथ सदा ललाम
 भापन भक्त के सभी काम
 पल प्रतिपल

बद कर यां स अदा अपार
 मन हा मन में वह धार-धार
 मानसिक शिखर पञ्जरधार
 धी करी

मीनां माथों के मद्य नाथ !
 पुरी पर रगना क्षमप हाथ
 यह कामन बलि नत-नयन माथ
 कर-बद्ध

करना जाता धी क्षमाजन
 मीनों विगिनत वह कथा-भक्त
 नदान हुआ जाता था मन
 शिखरमथ

शिवन मदान शिवन सुन्दर
 मीनार मथन का पगार ?
 उमरी दुर्गतन व भर वर
 मन्दरनी

यों सोच रही थी वह बाला
 जिसका म जगत् देखा भाषा
 भाषों का विस्तृत था जाला
 सतरगा

सो गइ धही करते चित्तन
 धधी थी था ऐसा ही मन
 सपनों की क्रीड़ा हा वचन
 उच्छ्रु खल

उमकी निःसृत-भाषात साँस
 में था गहरा विश्वास हास
 पर जाने क्या मा थी उदाम
 सन्मुष्ठा

उसके श्रवणा में एक बात
 मा ! तुम क्या गाती हो प्रभाव ?
 किसका करते सधान तात
 मुद्रित दृग

में उनको कैसे कर प्राप्त ?
 तुम कइती थे सर्वत्र व्याप्त
 धरती का छार कहा समाप्त ?
 उद्गमस्थल ?

चण चण फर पूरी हुई निशा
 हंस पदा पर्व में अरुण उपा
 तम हुआ लीन था स्वच्छ निशा
 ज्यातिर्मय

धी जाग पदा मीराँ चञ्चल
 ध्यन्त निकट उमके जयमल
 दोता क्रीडा-तमय निरछल
 निज दनिक

दोखी मोरों भैया जयमल
मेरी सुकियों का विराद कब
देखो, यह पहनेगी महामल
रक्षाक्रिय

आओ, हम तुम चुन-चुन लारों
पीपल के पत्ते जो पारों
का धलो म काई ल जाये
सधय कर

ये पर्व-खयन का धन युगल
माना गतिमय विरयाम सरल
कृष्ण क निरुद्ध रहा चन्द्रल
धति विष्णुव

उमड़ी शीलल गदरी छाया
म मुग्धमय कृष्ण का बापा
शाखा पर पारों का माया
मनमाहक

पीपल की छाया में दो गग
कृष्ण क बहुत निरुद्ध लगभग
सकते थे इतमनन भग-भग
पद कर-वह

दहन लग व गद मूल
काये ल क्या उदरेय मूल ?
का व गद विर भाद धुल
वनप पर

वनपट का धा जमपूरुं गर्न
कह कैंड ता डट वरुं
धारम में शनों द्विप शनं
राभारिक-

मीरा

मोड़ने लगे नखें जल में
 घूमने लगी तिर तिर पल में
 'इपातिरेक अतस्तल में
 संप्लावित

कागज की दोनों स्वच्छ नाव
 प्रिय थ उनको व हाव भाव
 दोनों को ही अत्यन्त चाव
 जिज्ञासा

चण चण प्रतिचण पल प्रतिपल कर
 जत्र एक नाव दूपा गल कर
 मीराँ पछताइ कर मल कर
 ब्यामूदा

कागज का ही यह रहा खेळ
 पर यह न ब्यथा कुछ सकी केळ
 'सच लिया मान थी शुष्क बेल
 मंचितन

स्मृतियों की वीस हुई सरखी
 वह कितनी सुन्दर थी तरखी ?
 मानम की काँप गई धरखी
 चालोइन

पर भूली क्योंकि धमी बाला
 सुख-दुख से पदा न था पाबाला
 दया न अभी तक था काला
 तम भीषण

फिर याला पों प्रमल जयमल
 स कहती रही न मुक्तस कल
 'धन्दा मामा मरे अदिरल
 धनुगामी

प्रथम सर्ग

मा काता थी वीं नहा बाग
व चलन मम माय-माय
कहत य यह ही बाग ताग
मन्नादिग

फिर बोल पडा वह नही नही
व माय तुम्हारे चल कहा ?
मरे अनुगामी महा परी
त्रिपु मामा

माँ न यह क्या बनाइ है
काता, वह बुद्धिया भाइ है
करती निज वहाँ बनाइ है
घापा में

यह मा माँ ने बस दिया जान
मीचे धरता व अन-वान
है एक मींग वाला महान
धरपी-धर

जब-जब भी होगा वान इरा
मला है वह व्यवसाय जरा
परु कर तब जाती वैन धरा
दिग्दर्शन

तरी का ज तुम्हारा प्यारा
वह नम ही मींग का धारा
रग पर सुर-सुर पय म्यारा
दूरानिक

दमाँ फिर वृण में मुक कर
कामन का तुप नद-नद कर
का प्यार क्या फिर कहुक पर
धरपी

मीठ

घोड़ने सगे नखें जल में
 घूमने छगीं तिर तिर पल में
 ह्वातिरेक अतस्तल में
 सञ्जावित

कागज की दोनों स्वच्छ नाव
 प्रिय थ उनको वे हाव भाव
 दानों को ही अत्यन्त चाव
 मित्रासा

बख-बख प्रतिबख पल प्रतिपल कर
 जख एक नाव हूँबी गल कर
 भीरों पड़ताई कर मत कर
 ब्यामूदा

कागज का ही बह रहा खल
 पर वह न ब्यया कुछ सका केख
 सख लिया मान था शुष्क वेख
 सचिनन

स्मृतियां की दीस हुई सरखी
 बह किनना मुन्तर थी तरखी ?
 मानस की पाँप गई धरखा
 आलोकन

पर भूली क्योंकि अमी बाला
 सुख-दुख से पड़ा न था पाखा
 दया न अभी तक था काखा
 तम भीपण

फिर थाखा यों प्रमत्त जयमल
 स कहती रही न सुम्न कल
 'बन्दा मामा मेरे अविरस
 अनुगामी

ना कदा ही लो गहा कत
वे कत न कत-माय
कत य कत हा कत कत
कत-कत

लि देह पहा कत नही नही
वे कत कतरे कत कही ?
ने कतना कत पहा
विदु नन

नी ने कत कत कत है
कत कत कत नत है
कत लि कही कत है
कत न

कत नी नी ने कत लि कत
नीने कत क कत कत
है कत नीने कत नत
कत-कत

कत कत ना कत कत कत
कत है कत कत कत
कत कत कत कत कत कत
कत-कत

कत कत कत कत कत
कत कत कत कत कत
कत कत कत कत कत
कत-कत

कत लि कत न कत कत
कत कत कत कत कत
कत कत कत लि कत कत
कत-कत

मीरा

दाना करते करते श्रीक
 खड़ने लग गये, हुई अनवन
 व भूल गये सब अपनापन
 ये मोहित

मीराँ का भर मिट्टी मे तन
 जयमल करने लग गया रुन
 उसन भी उसका किया वदन
 रुनोल्लसुन

फिर रोते-रोते चल गेह
 व धूलिकण स भरे दह
 अचल में मा न किया स्नेह
 मधुभाषण

कितने हा या निशिदिन याते
 याही रहते हारे जीते
 व साथ-साथ ग्वात-पीते
 ये निरद्वल

सोते जगते मा क चिंतन
 से वह मा विमु में मन ही मन
 तहीन हुआ करती प्रतिदिन
 अज्ञाता

मा स्वय शीख विरवास-युता
 तो क्यों न विमल निष्काम सुता ?
 पूजा कलिका की हरा लवा
 रस-प्लावित

कोई दिन इनके एक बार
 धूमता साधु घर दार-दार
 आया पाकर सत्कार प्यार
 धदामय

प्रथम सग

था वशीधर की मूर्ति पास
उसके, अभिनव सुन्दर सुहास
पाने उसको मीरा उदास
थी व्याकुल

छोड़ा उसन सब खान पान
प्रतिमा में ही बस गये प्राण
दा दिा थीत पर वही ध्यान
वह ही धुन

मा ने समझाया बार-बार
ऐसी चीजों का क्या विचार ?
में और मँगा दूँगी अपार
मनवाङ्कित

पर उसक शतर की पुनार
गहरी थी या गहरा विचार
सन हुआ म्नाग पर कहाँ हार ?
ध्रुव चिन्तन

यात्रिका जाग उसन अजान
ये किये मूर्ति क गुण-यत्नान
शिष्टियों में जिज्ञासा प्रधान
अपना इठ

था उस सबथा नहीं पात
दृष्टना फैलगा यहाँ यात
उसक मन में थायात-धात
पड़तावा

उसको प्रिय था वह मूर्ति महा
पर भायुकता का स्रोत यहा
ता सहसा निकला धन्य धहा !
यह बाला

अन्धकार के महा विष से
 सौम-साप का धनि छाती थी
 माना गग का गहन काष्ठिमा
 मिर पुन पुन कर पड़ताता थी
 यका हूई थी कान्ठ पारख में
 ब शब्द पर पग पसार कर
 ल गड अभिराम कुत्र में
 ज्यों हरिया मुप बुध विमार कर
 ज्ञान धार निज न हुलन से
 निद्रा टूट गई प्रियतम की
 मुद्र नयन जभाई छाई
 ज्ञानि हाथ परों में चमकी
 म्वल ननु विस्मृष्ट वार्था में
 म्वर अदुताग नरे ये बोल
 पर न पापन म्वन् थचणों में
 कद गाड तुम हील हीले ?
 कद्र ध्याय में यों वह बोली
 कम का पन धान का ?
 पाप नहीं जब रहा छात्र कुप
 नपन निज न में जो पाने का ?
 दण धात्र भी होगी बातें
 त्रिम नि पृथाकी कोने में
 जग गइ ये रात-रात भर
 चन्दन के मधुमय गौने में
 जग प्रताप क य पल ही
 नदर बन गये ये बन्धन के
 या न हर्षों में नाद, मुनहले
 कान मा विस्तृत ये मन के

किन्तु प्रतीक्षा नहीं रही वह
आज घाप के दिन हैं प्रियतम !
नयन नींद में खो जाते यों
क्योंकि आज मैं रही न उत्तम

दिन मेरे हैं आज प्रियतमे !
तो क्या नहीं तुम्हारी रातें ?
समो व्यथ के म्हादे छोड़ो
करो काम की सुन्दर बातें

मुज-पाराश में बद्ध कर लिया
कह कर या प्रियतमा वृष को
बाली मीरा जग जाधेगा
करो न गुजित शयन वृष को

पहल ही सो गई आज यह
बिना दूध के ही बेचारी
और चढ़ रहा था परसो ज्वर
पीड़ित थी जिसे मुझमारी

इन दिवसो म इसके सिटफि
रही हो गई कितनी दुबली ?
खाने-पीने की चिन्ता को
छोड़ खेत में रहती पगली
मंदिर के पूरे बाबा से
कहा आपको, लाला जतर
बिटिया के हो गई नजर है
पीड़ित से पदवाओ मतर

किन्तु आपने किया न कुछ भी
जाने क्या काते हो दिन भर ?
चौपड़-पारो में रहते हो
मिलता क्या अवकाश न लयभर ?

मीरा

केवल एक शर में कन्या
 पवान नहीं देत उस पर भा
 बाहर ही बाहर की चिन्ता
 आखिर है तो अपना घर भा ?
 नहीं परे भगवान किन्तु फिर
 भी यन्त्रि कुछ भी इस हा गया
 जीवन का आधार हमारा
 बिर निद्रा में फही सो गया

तो मैं कहीं छिपाऊँगी मुच
 किसको देख-दख जीऊँगी ?
 किसके साथ साय हँस मिलकर
 क्या कहूँ, साऊँ-पीऊँगी ?

कह कर यों गभीर हो गई
 घूम रही थीं सृष्टियाँ सारी
 वे दिन, जिनमें सतति-कारण
 फिरती रहती मारी मारी

जरा जरा से भी जन जन की
 करनी पड़ती थी उपासना
 रखना पड़ता था सब का मन
 रही अमित सातृव-वासना
 स्नान ध्यान, सर सिधन पूजा
 निराहार निजल व्रत चिन्तन
 में झुंझार गुँजती धार्यें
 पुष्पवती होने क मधु चय

मूर्तिमान् प्रत्यक्ष हो गये
 कटिन साधना जप-तप अखिरल
 सोच-सोच यों थी वह चितित
 कहीं छूट जाये यह संबल ?

द्वितीय सर्ग

धार-धार यह सोच-सोच कर
 भी न जरा कुड़ जान सही थी
 घूम रही थी इधर उधर हो
 निश्चित पय कुड़ पा न सकी थी
 राजपुत्र कुल की माताओं
 का भा पुत्रा क्यों न सुहाती ?
 पापल—रमिका—मालाओं से
 क्या भ्रमहाय उदासी छाती ?
 किया प्रश्न ज्या हा यह उसन
 उसके पति गभीर हो गये
 उत्तर की हो गई समझ्या
 चिन्ता में मरुधार खा गये
 पर उपहास लिये फिर बाले
 क्या लड़का भी धरे ! काम की ?
 चीज पराये घर की आखिर
 कवल घिता सुबह शाम की
 धार न सतनि हमें इसलिये
 प्राणो स प्यारी लगती है
 किन्तु जन्म पर क-याओं के
 कुंभलाता मारी जगती है
 इसका मुख्य हतु है यह ही
 है समाज की विषम व्यवस्था
 जिसके घर में कन्या उसकी
 नहीं सुपरती फनी व्यवस्था
 कपट आभूषण दुहेज में
 जीवन व्यर्थ चला जाता है
 कन्याशाल को पग-पग पर
 धारधारें दुसा जाता है

मोर्चा

एकमात्र कन्या-विवाह में
 विक्रि जाता है हरा मरा घर
 सब स्वाहा कर देने पर भी
 घर धालो को स्वाद नहीं पर
 इसीलिये बचत पीढ़ा से
 मोख कहीं मगादा लेते हैं ?
 कन्या जग्मी यह सुनते ही
 नीचे घाँस गद्दा देते हैं
 न्याय न यह, अपराध भयकर
 किन्तु करें क्या, सभा विवश हैं
 मैतिकाता गिर गई सभी की
 एक व्यक्ति का क्या कुछ बराह ?
 मानव के पावन भतरू का
 स्पदन ही विवाह है मनुज
 किन्तु आज कितनी कृत्रिमता ?
 पावनता में गया स्वार्थ छुब
 टेस लगी मानस दुख पाया
 याद गई बातें आती यों
 तिरस्कार होता था प्रतिनि
 यह भी कन्या कइलाती थी
 और सगाई के अवसर पर
 पिता बहुत ही दुख पाया था
 जो कह देता यही-यही जा
 बार-बार ही भरमाया था
 मा कहता थी, तू जग्मी है
 उस निम से हम पाठ है दुख
 इधर उधर भटके फिरते हैं
 जिस दिन से दशा सरा मुख

विद्या किया घर से जय उसने
 तो जी भर कर पीया पानी
 और यहाँ श्वसुरालय की तो
 घतिशाय दारुण कष्ट-कहानी
 ननदो के उपहास विप भरे
 धनी सास की वे फटकारें
 सुन-सुन कर उर रो पड़ता है
 अश्रु झलकते न्यारे-न्यारे
 निरुद्देश्य ही बिना काम ही
 पति द्वारा मारी जाती है
 जिनको सुनकर पत्थर की भी
 धारमायें घरा जाती हैं

इसी चिन्तना में ही उसकी
 मौन दृष्टि जा पड़ा सुता पर
 पानी केर दिया जावेगा
 यो ही इसकी भी इच्छा पर
 क्या प्राणो से भी प्यारी यह
 योंही सदा छली जायेगी ?
 दमन-छप्प में महाशिला पर
 योंही सदा मली जायेगी ?
 इसकी भी अरुणोदय लाली
 क्या अणु भर में स्नान बनेगी ?
 जीवन के पथ पर चल-चल कर
 थक-थक कर निप्याण बनेगी ?
 साध-साध नीरस उदास थी
 उसे दस चिन्तित घ बोले
 अरे, कौन चिन्ता जो रोई ?
 क्या उर में हो गये फफोले ?

मोरी

जरा जरा सी ही बातों पर
 तुम चिन्ता में खा जाती हो
 धनजाने अंतर-प्रवेश को
 अशु-क्यों से धो जाती हो
 तुम नारी हो हृन्त्य तम्हारा
 बुद्धि-क्या से घना हुआ है
 मानस के निर्मल अक्षर में
 इन्द्र धनुष सा तना हुआ है
 किन्तु पुरुष का अक्षर भी तो
 घोर घटाच्छादित अक्षर ह
 उसकी उमङ्ग शुभङ्ग का गर्जन
 महा भयकर अक्षर अक्षर है
 मैं बूझ हूँ मेरी कल्पियाँ
 पीडातप में मूढ गई हूँ
 पर प्रसन्न मैं कब निरारा हूँ
 क्या मानव की मूख गई हूँ ?
 यह भीरों कितनी माती है
 मैं सा बुद्ध भी कह न सकूँगा ?
 आँसु से ओझल होन पर
 मैं इस जग में रह न सकूँगा
 किन्तु सग्न रोते रहना ही
 मुझे न किंचित् भा भाता है
 क्या मानव सुन्दर धरता पर
 अञ्जल राने को आता है ?
 तुम इसकी चिन्ता चिन्ता में
 सब उल्लास गँवा चगी हो
 भीरुमता के तमस-खोक में
 धीरे धीरे जा घेरी हो

द्वितीय सर्ग

मीरा की माँ लगी सोचने
 अनुनय विनय भरी ये बातें
 इनकी वैसी की वैसी हैं
 यद्यपि बीत गये दिन रातें
 मेरे चारों ओर निरंतर
 इनकी अभिनव अभिलाषायें
 मँरागी रहती हैं कवल
 मुझे छोड़ इनको क्या भाये ?
 बाली—फिर उपहास व्यंग्य में
 क्यों आकर्षण चला गया क्या ?
 छत्र प्रतिक्षण अथ तन परिवर्तित
 शेष रह गया और मया क्या ?
 मेरे पीहर में चाकर जब
 सखियाँ पर तत्काल हुए तुम
 तभी अरे मैं जान गई थी
 विचलित पथ से हीन हुए तुम ?
 मँहप-नीचे भी बोले यदि
 मिलें दासियाँ मुझको अगणित
 तो मैं शकुन मांगलिक देऊँ
 मवल वधू को सुख देऊँ नित
 तुम मरे पीहर-घर भर को
 समा तरह से खाए गये हो ?
 घर का किमने ही देखे पर
 तुम ऊपर के पाट हुए हो ?
 तेरी व भलयेली सखियाँ
 ज्ञात तुम्हें क्या कहाँ आजकल ?
 उनके बिना तुम्हें छत्र मर भी
 पड़ता थी कुछ नहीं कहाँ कल

मीरा

बोली यह, क्या करें विघ्न हम
 तुम ठग उदरे मित्र निरासे
 दूर दश ठग कर ल थाये
 धारों ओर लगाये ताले
 सोने के पिजड़े में सीमित
 हुई सुखद ऊँकार हमारी
 मम के विस्तृत कृप्याचल में
 साधिन मोह म्यारी न्यारी
 चुपके से विजड़े में घुमकर
 भीटे बोल सुना जात हो
 अपनी कुत्सित पृथित वासना
 तृप्त बनाने ही धाले हो ?
 सुनियोँ क्यों जाने हम भी कुछ
 अपनी अभिखापा रखती हैं ?
 धार उसी के जिये रात दिन
 रात रात भर भी जगती हैं
 पर पुरुषों को मनु की चिन्ता
 उनको तो मकर चादिये
 सारभ आतप्रोत कलियों को
 शूद्र पशुदियों व चादिये
 लगा साधने, मीरा मेरी
 धनवाने घर में जायेगी
 धीर म जाने कितन दिन—
 पञ्चान् लौट पीहर आयेगी
 संगिनियों को छोड़ अपरिचित
 जन को परंवरा प्यार करेगी
 उसड़े जीवन का नारसता
 पीदायें दुख भार हरगा

द्वितीय सर्ग

मा, को भी विस्मृत कर दगी
और नया संसार बसेगा
नई चेतना नई भावना
एष प्रतिष्ठा प्रतिफल विहसेगा

और कहूँगी जब मैं बेटी !
यहाँ और रुक जाया कुछ दिन
हाथी के पीछे भेजूँगी
तब यह नीरस सी दिन गिन गिन

दूर देश से किसी व्यक्ति क
आने की प्रतिदिन सोचेगी
किसी काक की काँव-काँव पर
मन में बहुत बलियाँ लेगी
लेने को चाये देवर की
जब कितना ही बात सहेगें
ना' करन पर तमा कहगा
मा ! मुझको व बहुत कहेंगे
और हमारा पक्ष छोड़ कर
तब देवर स मिल जायगी
साम, ननद दुम्ब पार्वी होंगी
कह-कह कर या बहकायेगी

पीहर को तजते मननों में
विरह-व्यथा की धार बहगी
पर प्रियतम के लिये सभी कुछ
मारा धारधार सहगी
मा का विरह सतायेगा, पर
उस पर भट मुस्कान खिलेगी
एक बार का विधुही दुहिता
कौन कह कर पुनः मिलेगी ?

मीरा

थोली वह, क्या करें विवरा हम
 तुम गग ठहरे मित्र निराले
 वूर दरा ठग कर ले आय
 चारों ओर लगाये ताले
 सोने के पिजड़े म सीमित
 हुई सुन्दर झुंझर हमारी
 नभ के विस्तृत कृष्णाचल में
 साधिन ओड़ म्यारी म्यारी
 चुपके से पिजड़े में घुमकर
 भीटे बोल सुना जात हो
 अपनी कुत्सित घृणित वासना
 तृप्त बनान ही धान हो ?
 दुनियाँ क्यों जाने हम भी कुछ
 अपनी अभिलाषा रखती है ?
 धार उसी के छिये रात दिन
 रात रात भर भी जगती हैं
 पर पुरुषों को मधु की चिन्ता
 उनका तो मकरद चाहिये
 सौरभ-आतप्रोत फलियों की
 खुदु पमुदियाँ बर चाहिये
 खगा सोचने भारी मेरी
 अनजाने घर म जायेगी
 और न जान कितने जिन-
 पश्चात् छोट पीहर आवेगी
 संगिनियों को छोड़ अपरिचित
 जन को परंवरा प्यार करेगी
 उसके जीवन का भीरसता
 पादाँ घुम भार हरेगी

द्वितीय सर्ग

मा: को भी विस्मृत कर देगी
 और नया ससार बसेगा
 नई चेतना, नई भावना
 चण प्रतिक्षण प्रतिपल विहंसगा

और कहूँगी जब मैं बेटी !
 यहाँ और रुक जाओ कुछ दिन
 होली के पीछे भेजूँगा
 तब वह नीरस सी दिन गिन गिन

दूर दूर से किसी व्यक्ति क
 जाने की प्रतिदिन सायेगी
 किसी काक की काँव-काँव पर
 मन में बहुत बलियाँ खेगा

लेने को भाये दवर की
 जब कितना ही बात सहेगें
 'ना' करन पर तमा कहगी
 मा ! मुझका घ बहुत कहेंगे

और- हमारा पच छोड़ कर
 तब' दवर स मिल जायेगा
 सास ननद दुख पाती होंगी
 कह-कह कर या बहकायेगी

पीहर को तजत नयनों में
 विरह-व्यथा की धार बहेगी
 र प्रियतम के लिये सभी कुछ
 मारी बारबार सहगी

मा का विरह सतायेगा, पर
 उस पर झ मुस्मान खिलेगी
 एक बार का विधुका दुहिवा
 कौन कह कय पुनः मिलेगी ?

'तब मा जी अपनी पुत्री के
 सुख में अपना सुख मानेगी
 पुत्री भूला पर पुत्री को
 तो मा पुत्री ही जानगी
 पीड़ा अत्याचार सहन कर
 वह अपने का सुखी वहगी
 मारो पीटो पर वह प्रिय की
 चिन्ता मं ही हीन रहेगा
 यह नैसर्गिक नियम जगत् का
 नारी द्यात्म-समपण कर दे
 पुरुष संयमी निज पौरुष से
 भरी भुजाधर्म तन धर दे
 पर, मारी धरणा की जूती
 निज जीवन में मही बनेगी
 वह न सकुचित हो रायेगी
 आत्मा का मगीत सुनेगी
 इसके लिय अभी से मुझको
 इसका ज्ञान कराना होगा
 इसकी नैसर्गिक स्वतंत्रता
 पर भी ध्यान घराना होगा
 एक प्रज्वालित दीप सहस्रों
 शार्पा का आलाकित करता
 खा जीवन का आत्म-हनन यह
 मुझको बारबार अक्षरता
 हवन में उसके प्रियतम मे
 ऐसी कोई बात सुनाई
 जिसके कारण हँसते-हँसते
 रूप-मान धर्मों भर आई

उसको सञ्चोधित से करते
फिर मीराँ क थापू बाल
रुखो तुम जो निय रात दिन
सोचा करती हीले-हीले

ऐसा करना ठीक नहीं है
इससे तन कृत्र हा जाता है
सभी जानते यों । चिन्तन में
कभी न कुछ आता जाता है

इस चिन्तन का दुष्प्रभाव फिर
मीराँ पर भी बहुत पड़गा
जैसी मा बँसी ही पुत्रा
हो जायेगी मन उजड़गा

इस नन्दे नन्द पल्लव का
सदा खेलने दो, खाने दो !
पूल-पूल कर बढ़ तिल तिल कर
धृन्तों पर नी भर छाने दो !

प्रिय गिरधर गापाल दाग कर
यह क्या ऐसा आदत जाली ?
मोले जगग उटो चलगे
रखती प्रतिमा काली-काला

धरे आप भा कन मोले ?
अम में ही भूले पड़ते हा
साधारण सी बात रहा पर
जाने क्यों इतना खदघ हा ?

मुझ को अपनी नन्दा दिटिया
बहुत-बहुत प्यारा लगती है
साथ-साथ भरे प्रात हा
प्यान, चिन्तना को जगता ह

लघु लघु स्वर का मृदु युद्ध कंपन
 आराम को पावन कर देता
 चमा, धैर्य, सतोष सत्यता
 अतराज में शिष्य भर देता
 हरी मरी वृषा दोने में
 फूलों का सचय कर जाती
 मधुमय कल, पक्वान्न आदि से
 फिर गिरधर के भोग लगाती
 इस छाटी सी ही दुलहिन न
 अपना प्रिय पहचान लिया है
 जग-जीवन क्या है, इसने तो
 इसी आयु न जान लिया है
 इसका जा समार शृंखल है
 उसका रचना हा भवारी है
 इसे शक्त है, जिम् अरुत को
 जगती खोज-खोज हारी है
 हमकी सामिन गुदियों के ही
 खेलों में खोइ रहती है
 जग के मुख-मुख, हर्ष-कष्ट में
 दूष-दूष बढ़ती बढ़ती है
 पर इसकी एकान्त-साधना
 इसके पूर्व जन्म का पख है
 क्षुधा पिपासा लोभ, मोह में
 इसका कभी न मन चञ्चल है
 यों ही कह दमे पर इसने
 उसको प्रिय आराध्य बनाया
 आपि मुनि जीवन में भी जिसकी
 नहीं जान पाये कुछ माया

समझाऊँ भी तो कह देती
 मा ! तुमन ही तो बतलाया
 इसम टाप नदी, यह तो सच
 है उस ही ईश्वर की माया
 मस्तक पर टिकिया चन्दन की
 लगा, हाथ में ले कर मास्ता
 यों जगती मानों जगती में
 दूँके रहा शारवत उजियाला
 चरणारुत में सुलसी होना
 तो यह कभी नहीं बिसरासी
 प्रतिमा का परिश्रमण प्रात म
 सायं या दो बार लगाती
 आशयान्वित थे फिर बोले
 मैं जब तो दता हूँ पैस
 य सचके सच ही प्रतिमा पर
 रख दती वस के वस
 उनकी कुछ भी चीज न खाती
 कभी न रखती है थ गिन गिन
 यह गिरधर की भक्त निराली
 यह तो पछी बनी पुजारिन
 इसी बीच में सहसा मीरों
 सोते-साथ वाली, बहकी
 माना अर्धरात्रि में कोइ
 चिकिया चौंच साल कर चहकी
 बार-बार ही हँसी मिलखिला
 फिर गंभीर बनी चिन्तामय
 उन दाना ने दता इसको
 बुरे स्वप्न स हुआ कहीं भय

आशका धी चेत बरा कर
 खने पहुँचे भय का बारी
 वह बोली निर्लस भाव से
 मा ! मुझका धीकृत्य बुझाते
 कालिन्दी क रम्य पुलिन पर
 तरु-झाया में घेणु यजाते
 हरी भरी कोमल वूर्वा पर
 बट-बैठे घेनु चरात
 उनकी ओर अमसर हाते
 ही पवमाम भयंकर आया
 धूमिल अधक सीन दिशाएँ
 अस्त-व्यस्त पथ पर तम झाया
 भूल गई पथ मिला न कोई
 दाँवाहोल हुई मन हारा
 रोई, पल प्रतिपल रोई सब
 गिरधर ने द दिया सहारा
 तिमिर तिरोहित ज्यासिमय जग
 ह्यो के त्यो ये ये मुझको
 गावन स्वर-सहरी में भूषो
 प्रतिपल अपने पास बुलाते
 मात पिता निरचल, अवाक ये
 दोनो देख रह न अघाते
 उनके उर में यही रागिनी
 मा ! मुझका धी कृत्य बुझाते



तृतीय सर्ग

★

बीज क मानस में अज्ञान
नवल अक्षर का अरुणिम प्रात
पुन क्षण प्रतिक्षण क्रमिक विकास
स्निग्ध व यनते अक्षर पान
और उन पयों का उद्भास
विविधित फाकर बनता फूल
फूल में गंध रूप रस स्पर्श
समय पाकर हाथे फिर धूल
घल का फूल, फूल की घल
यही जग का अतहित मूल
फूल ह सूक्ष्म धूल है स्थूल
नाम दो किन्तु एक ही फूल
न जाने कब स यों अविराम
घल आठ ह द्वापा धूप ?
सृष्टि से नित नवीन रिस्तीर्ण
विश्रपट पर अकित दो रूप

प्रात की अतिम रखा रात
 रात की इतिथी पूर्ण प्रभात
 एक ही वस्तु उदय ये अस्त
 एक हा चक्र-अमित दिन रात
 जगत् को किन्तु अनाली रात
 विभाजित क्रिये पतन उल्लान
 गया बन प्रात स्वर्ण विद्वान
 अस्त का मान लिया अवसान
 सृष्टि का आदि न और न अत
 जगत् निस्सीम न इसका पार
 क्रिया सुविधानुसार ही स्वयं
 मनुज ने यह सीमा-विन्दार
 अरे मानव ही स्वयं अपूर्ण
 निम्न है उसका ज्ञान विचार
 तरी कागज की क्षुद्र समाम
 अधि को क्या पर सकती पार ?
 अकुचित सीमाध्या में निम्न
 धूमता मानव बारबार
 धार उन सामाध्या का द्वार
 बन रहा है संसृति का पार
 जहाँ से चलने का आरम्भ
 वहीं पर आ जाते सब धूम
 सभी की अपनी-अपना बाल
 सभा की आशाध्या में धूम
 मनुज का यह विनाश निर्माण
 सुनिश्चित जिसकी अपनी माप
 माप से पहले या मँकधार
 स्त्रलन है जावन का अभिशाप

तृतीय सर्ग

सुसुम की गति का हो प्रारम्भ
उधर ऋद्धने को होवें पात
सुमन की अभिलाषाएँ शेष
व्य उर में करती आघात

मूलस कर पत्ते जाते सूख
मुकुल रहती पृष्ठाकी मौन
निरन्तर हिमवृण आतप शोत
कष्ट देते पर ढरुता कौन ?

यालिका की जननी अवदात
दुई ज्यों ही ऋद्धने को पात
मुकुल मीराँ उसकी असहाय
सहगी जैसे हिमवृण, घात ?

हर्गा के आगे तम का मृत्य
हृदय में गहरा पश्चात्ताप
गिरुद कर बना गात्र ज्यों शूल
व्याप्त अभिलाषायों में ताप

क्रिये कितने ही सतत उपाय
मुकुल आई पयों के बीच
अविकसित मुकुल, पण भी ग्लान
न पाई पयों से रस स्वीच

एक कोने में निरचल भग्न
हृदय के भाँति भाँति के भाव
बुदबुदे उठते, होते लौन
यना मानस में करते धाव

रात को जा थाया था स्पन्न
उसी की ही चिन्ता दुःख व्याप्त
विज्ञान में माराँ थी चुपचाप
दुधा हो जैसे अमृत प्राप्त

भीरी

यामिनी स्तम्भ चन्द्रिकालीन
 रजत सा फला विस्तृत जाल
 षट् रही थी समगति स नाव
 पवन अनुकूल ठ रहा ताल
 छहरियों पर तिरता थी शुभ्र
 मंद सरणी ज्या राज मराल
 कुमुद-कुल का कमनीय सुहास
 तरी का चक्षु विशुद्ध प्रयास
 निरन्ध कर भीरों थी तल्लीन
 गूँजते थे धोखा क तार
 पास में घटे थे प्रिय मौन
 नयन ये धार दृगों में प्यार
 त्रिभु परिवर्तन हुआ अकाल
 आरु सहसा ही डोला नाव
 तरंगों हुई चपल उफाल
 पवन का भा प्रतिकूल प्रभाष
 कुमुद-कुल की कलिकायें पुष्प
 टूट कर हुई शून्य में खीन
 भीम क्रम का चातायात
 ख्योम हो गया सुभांशु विहीन
 अन्न जल कुर्भों में सवग्र
 छा गया महानिमिर घनघार
 तरी उद्भेदित हुई अशान्त
 रह गया था मरुधर न क्षीर
 उलट कर नाव हुई जलमग्न
 हुए प्रिय भी सहसा अज्ञात
 रह गई पृथ्वी जल-बाध
 अचेला भीरों परवश-भात

तृतीय सर्ग

अग्नि का भीम उतार-चढ़ाव
 याचियाँ नागिन की ज्यो हलज
 स्वप्न हो गया अघानक भग
 नयन ज्यों दिये किमी ने खोल
 कष्ट दिन पीछे का थष्ट स्वप्न
 घान भा छेड़ रहा या तान
 चित्र की भाँति एक पर एक
 सस्मरण घात जाते म्लान
 करवें सती बारबार
 स्मरण का नदी टूटता तार
 श्रवण-सुँ में वह ही ध्वनि एक
 हगों में घटा स्मरण-संचार
 पिता मारों के कहते बात
 रघेगा धूम घाम से ब्याह
 'अथ गन काम दासियाँ भृत्य
 सुता को देंगे जितनी चाह
 णठ ही पुत्रा का सम्बन्ध
 करों ध्यय अनुपम धन घान
 दाव कर सभा करें आक्षर्य
 सुन ता सुल जायेगें कान
 साचती र्या हो पाती विघ्न
 सुता को बुलवाती फिर पाम
 शीश पर हाथ फिरा, मुख चूम
 मनोरम कराती हास विलास
 पिनाकी आर पिनाकी नित्य
 करों से हा नित भाजन-पान
 हगों में दती अजन मनु
 धराता हाथ्या से ही स्नान

मीरा

कमा करती मीरों धनुरोध
 सुनाओ मा ! गिरघर की बात
 वही जिसमें जन्म थे कृष्ण
 अंधेरी थी मादों की रात
 सुता का भोजा भाला चाव
 बहा हो जाता मा को दूर
 सुता सुनती, मा कहती बात
 कृष्ण-क्षीजा में दोनों चूर
 क्या में भूला स्वच्छ स्वभाव
 निरक्षती मा, जाता धवसाद
 बालकों में कितना विरवास ?
 गये बचपन की आती याद
 नित्यप्रति का घों निरख दुलार
 सुता की चाची, ताई भार
 पास की मदिजाएँ अविराम
 याद करती ध्वसात्मक धार
 धरे यह सो है पुत्रा भात्र
 कहीं हो यदि सुत हो सत्तान
 धरण रखती न धरा पर कौन
 कहे कितना होता अभिमान ?
 जनों की आलोचना, कुरीति
 धयण कर होता उसको खेद
 सोचती रखते क्या हूँ लोग
 पुत्र-पुत्रा में इतना भेद ?
 पुत्र के ही क्या लाड़ दुलार ?
 सुता हा क्या कर छाड़ पाप ?
 पदी क्या तिरस्कृत इवभाग्य
 लिये रे जीवन में अभिशाप ?

तृतीय सर्ग

एक पुत्रों का ही परिवार
 चला सकता है क्या समाप्त ?
 कहाँ है पुत्रा जैसा प्यार ?
 सृष्टि का दुहिता हा पतवार
 दिवस, फिर रात दिवस फिर रात
 बढ़ होता त्रिस्तता जलजात
 दूबते तिरस ये जन जाव
 जागत का बढ़ता सतत प्रपात
 दुई वह महसा हा निर्जोव
 एक दिन लिये ललाम विचार
 हृदय में अभिलापापुँ दिव्य
 स्वजन के प्रति सचिन सब प्यार
 अफेल पति बँट थ मूक
 स्नेह जीवन का हुआ समाप्त
 पूर्व-जन्मों क कोइ पाप
 सो गई सौरभ हाकर प्राप्त
 कर्ण-कुहरों में गुनित एक
 नष्ट होत जावन का गान
 हर्गों के आगे स्वर्ण विहान
 दगा क आगे हा अवमान
 मृत्यु का भीषण प्रलय-भ्रवाह
 बहा ल गया मनु यह मूव
 बहा हा गई स्वय जब मात्र
 सदा भरती रहता जो स्फूर्ति
 शून्य क अचल में विधाम
 समी लत यह नियम अट्ट
 सुविदसित सुरभित कुमुम-पराग
 कहाँ ल जाता काइ सू

मीरा

नित्य मानव हारा यह ग्योज
 कान है वह पेसा अशात
 अचानक हर लता जो प्राण
 छोड़ देता है नीरस गात ?
 अमी यों का र्था रहा रहस्य
 गये युग पर युग युग ही र्थात
 सदा छोड़ भी ह्वन न जान
 अभा भी उरग्य प गात
 रिना न धन में प्रिये उपाध
 किरा न जग में क्रिया निपास
 रह अमफल ही मिला न टार
 हुण प सभी सुग्य फ प्रास
 इसा असफलता के हा नित्य
 गीत गाये जात अभिराम
 अमरता सुन्दर स्वप्न विमोर
 पगल् वा मिना नदी आराम
 दह मन प्राणों के उद्गार
 सभी इच्छाएँ उसकी शेष
 हुआ कब उसका पूण विशाम ?
 श्वेत हो पाय नदी मुक्तेश
 उमी की तन विभूति के साथ
 विजन में ग्योये मेरे प्राण
 चित्त की उल्लासार्था पर ध्यर्य
 करूँगा मैं न नाद-निर्माण
 त्विगत अन्तः या रमणाक
 नहीं मो लुट जायगा न्याम
 अक में पड़ी रहा चुनचाप
 सुत मारा ज्या अन्धाराश

उसे झाड़ थी मीठी नोंद
 हो रही धन्यमनस्क अज्ञान
 न जाने क्यों अस्यन्त उदास ?
 - माँस था उष्ण भ्रमित सा ध्यान
 रुदन मन्दन हा हा चीत्कार
 सुन थ उसने चारों ओर
 न न्वाया, पाया शिथिल शरीर
 न जाता मुख में कोड़ कोर
 एक मा मा' का कदया-भीत
 यहा गा प्रतिपल बारबार
 धात निद्रा में नीरव मग्न
 हा गड़ थी वह क्या उपचार ?
 उनी सो मा वह ही अनुरोध
 यहा मा रुव आदगी लाट ?
 मुता क ध्यथा प्रपूरित शब्द
 पिता का गला रहे थे घोंट
 यनी कर लिया गया था ध्याज
 तुम्हारा मा नाना के गाँव
 रुदन के धारो उसक किन्तु
 न चल पाते थे कुछ भा दौब
 सभा का जाना है जिस गाँव
 न यतलाया उसका कुछ नाम
 घराघर अण भुर त्रियमाण
 किन्तु उस पर भा जीवन धाम
 अरे यह जाधन का प्रासाद
 दूर जाना पड़ता है छोड़
 चिरतन नाता पाड़ पूव
 नहीं रख पापा काइ जाइ

गीरी

खेलता स्वप्नों स धरिराम
 मनुज में कितनी ममता माह ?
 विषय करते, शत मन जीत
 विपची के छबरोहाराह
 निश्चय के करते स्वजन दुलार
 किन्तु उसका जावन मुनसान
 धालिका लघु-लघु घट सुनुमार
 गई जाने कैसे पहिचान ?
 मिभूत कोन में थडी शान्त
 ताकती सदा छिलिज का छार
 पिघल कर धन्यह गाता स्वान्त
 एकटक मौन हर्ग की कोर
 गगन में उड़ते मत्त विहग
 धाटिका में सुमनों का सार
 दिव्य तारे करते संकेत
 किन्तु उनसे कुछ रहा न प्यार
 उसे लगता जैसे निर्जीव
 जा रहा है यह बहती दूर
 एक गिरधर-भ्रतिमा से नित्य
 रहा करता जीवन भरपूर
 सखानी कलिका सा मृदु गत
 जाइ पर-युगल भार नतभाल
 मूर्ति क धामे गाती गत
 करा चाकर गिरधारी खाल !
 सहली, साथी जयमल साथ
 खंदाता धाम्य मिचानी खेल
 कृष्ण तो होत अतधान
 हँसी गापो सुर-शुभ्य मख
 ५

तृतीय सर्ग

एक दिन बटे दानों साथ
 वहन भाई करते ये बात
 कहानी का खल रहा प्रसंग
 सुनी थी दानों ने तो रात
 इसी अंतर में एक विलाष
 लिये पजे में एक कपोत
 भागता दिया दिखाई दूर
 कयूतर की छाई थी मौत
 उठ दौड़े दोनों जी ताड़
 मृत्यु के मुख से किसी प्रकार
 छुड़ाया उसको, वह था खिन्न
 पदा कोने में, ले आनार
 वहा भाई की हुई सच्चाह
 पिलाये छाओ, इसका नोर
 धध क दाने दिये बिखेर
 चुगाने का कपात क तीर
 कर रहा मीरों उसको प्यार
 हुआ फिर भी वह ता भयभीत
 पाश सकता वह कुछ भी जान
 वहन भाई की निरङ्गल प्रात
 बहुत ही था जयमल उड़ द
 किन्तु मारों के आगे शान्त
 समाता अर में सुपचाप
 भीम अथक गतिमय, दुदन्त
 सुता दा दादाजा का सौंप
 पिता ये व्यस्त राज्य का काम
 राय दूराजी ये अति धृद
 पूरु हा काम राम का नाम

मीरा

घृद्ध बालक में यादों भर
 बाल में आशा घृद्ध निराशा
 निराशामय डटल पर काँत
 अरुण कापल का हुआ निवाम
 घृद्ध व जीवन की अनुभूति
 लिये थी अति ही प्रचुर अभाव
 छलकती थी हाने अभिष्यक्त
 इधर व विज्ञासा के भाव
 घृद्ध नित करते व जप ध्यान
 रहा जीवन का अन्तिम भाग
 ध्यान कर लाधा दूषा फूल
 भक्त मनो मनो में राग
 ताप-रुग्णा फलिका को पुर्य
 गइ मिल तन की शतल छाँह
 क्रिये जाता था पथ-निमाण्य
 पय-बाधा का पुर्य प्रवाह
 साथ उठ पात सोते साथ
 साथ ही जप तप पूजा ध्यान
 साथ ही काम साथ आराम
 भक्त ने व दा ही भगवान्
 ण्ड था दुनियाँ से अनभिन्न
 कृमरा सासारिक विद्वान्
 हा गये माना तिनक जीर्ण
 इमलिये नया नीन् निमाण्य
 अन्य यज्ञों का अति निर्णय
 पत्र उस कारा हो स्वत
 मूनि पर बाधो पैसा खोज
 विरहित होना यस रोठ

जगत् विनिमय का कादा-क्व-द्र
समा क ही गुण दाय स्वभाव
परस्पर खिचते सात खीच
पदा करता शून्योन्य प्रभाव

उमड़ता निर्मल पारावार
बालिका उसमें जाता दूध
आ गया था उसका आनंद
शुद्ध भी नहीं रह थ ज्य

कथा में पूछ लिया यह प्रश्न
कृप्य क्या लते हैं अवतार ?
मनुज हा जाते हैं पय-भ्रष्ट
धरा भी सह न सके जब भार

तभी ये लते जग में जन्म
चक्र का कर में लते धार
भक्त को लते शास्त्र उबार
राक्षसों को दते हैं मार

आप तो कहत सदा समान
कृप्य सब से करते हैं प्यार ?
करें क्या कभी किन्नी का श्राण ?
किसी को क्यों दते वे मार ?

कौन राक्षस कसे हैं भक्त ?
भक्त से जा करत सत्कार
और राक्षस हाते दुःख-न
कृप्य को भा दते दुःकार

भयंकर हाते बढ़े विराघ
मार कर खा पाते सब नाथ
जना का गला घोंगते व्यर्थ
रक्त पी करते नाथ शताय

दमन शोषण से हाहाकार
 गुँजता यहाँ, वहाँ उस पार
 मजनो का करने परित्राण
 कृप्य तब लेते हैं अघतार
 हृदय में उठते रहे विचार
 बाजिका पर न पा मकी पार
 राक्षसों के नख शृङ्ग अपार
 भयाकुल धरते धारधार
 प्राकृतिक उरकटा-धरा मीन
 न रह पाइ बोली यो बात
 रात को जलता तब तक शीप
 छिपकली भी तो करती घात
 जन्तुओं के हरते हैं प्राण
 नित्य प्रति कुनो घोर खिलाप
 रात भर छिप-छिप कर चुपचाप
 वनों में जानु रोखते बाँध
 भाम ने दुःशासन का रक्त
 झिया था पी अजलि भर तीन
 आप ही तो कहते ये बात
 मीन की धैरिन होती मीन
 सिंह, चीतों को दिये न दान
 शृगों का कब करते प्रभु प्राण ?
 सरलता-धरा बोला यह सुना
 सदा हरत रहत ये प्राण
 अत्यधिक दुःखा उहें आश्चर्य
 साफ नास्तिक्ता का सा बात
 लगे उनका ये तक अकौट्य
 इस कसे इतना यह ज्ञात ?

कहा पगला ! पशु हँ ये मूर्ख
 नहीं इनर्म मति, ये अनजान
 रहा करना पशु का पशु मत्स्य
 नित्य का घटना पर क्या ध्यान ?
 कृष्ण का हाँ यह माया जाल
 समा करने वाल भगवान्
 करे तो इन दाता पर ध्यान
 नष्ट हाता उतना हाँ पान
 कृष्ण का बाल विनोदा खेल
 क्रिया तो कालिन्दा के कूल
 सुनात य तन्मय व शृद्ध
 किन्तु यह उमर्म सका न भूल
 समझ मँ आया कुछ न विवाद
 समा करने वाल भगवान्
 वही मक्का का तनत जाल
 वही मक्खी क हरते प्राण
 पान करते हँ राक्षस रक्त
 नित्यमति, देते जय तय मार
 रक्त पीने वाल भगवान्
 कृष्ण ही खाते रहते हार
 कहँ दादाजी, शाश्वत ब्रह्म
 ब्रह्म से जग का प्रादुर्भाव
 ब्रह्म मँ ही होता जग छीन
 जगत् के मधर हँ सध भाव
 ब्रह्म हे क्या कैसा आवास ?
 ब्रह्म का क्या आकार प्रकार ?
 ब्रह्म मँ हाँ होना जय जीन
 अर्थ हँ तय आचार-विचार

चतुर्थ सर्ग

★

आज प्रफुल्लित कलि उपवन की
आघो मधुलिद, तान सुनाघो !
अनु आइ मधुमय गुजन की

पू-चू पकती जघु-पंसुदियाँ
कण-क्य में सौरम की लदियाँ
मह सकता न प्रतीता-वदियाँ
पूर्ण करो अभिलाषा मन की !
आज प्रफुल्लित कलि उपवन की

आज मागती यह आलिगन
कर-युगलों में ब-द करो तन !
प्राय हुए ब्याकुल जावन-धन !
हृष्टाँ छौं-सौ सुम्बन का
आज प्रफुल्लित कलि उपवन की

पल्लव-शय्या सरित्-किनारा
मु-दर बेला ढाया घन की
आज प्रफुल्लित कलि उपवन की
अनु आइ मधुमय गुजन की

चतुर्थ सर्ग

कृश कटि का शत-शत परिवर्तन
 मन को आकर्षित करता था
 नयनों का पीड़ा हरवा या
 भास्वोरित नव पल्लव की
 अभिराम लहरियाँ सा नर्तन

कटि की किन् किन् पायल के स्वर
 पग-पग पर मजु बरसाते थे
 कामिनियों को तरसाते थे
 हर्षाते थे सरसाते थे
 या बरस रहा अच्युत मर मर

मजु बालार्घा का सम्मेलन
 जिसमें गुणित कल सत्री पर
 प्रत्येक विशारी का अवसर
 उद्गास हास हार्वा भावों
 स पूष परस्पर कल केलन

गायन-स्वर-लहरी रकते ही
 श्र्यंग्यों म सगिनियाँ बोली
 लगता तो हो भोली-भोली
 प्रिय का आवाहन कर आजा
 वर में मजरियाँ उगते ही

अपरा ने ली घीया कर में
 सगायन का ताना बाना
 जा दूट गया था मनमाना
 समिलित हुआ फिर बिखर गया
 दस्त देरत धुंध भर में

मोरी

विद्युत् ने अथगुठन खोल
ससरग का सुन्दर अचल
दूर दूर उड़ता फिर चंचल
विजन पवन की भाँति भ्रान्त
मन भी डोले तन भी डोल

कुचित मुस पर अकित प्रीड़ा
अतर् में सुन्दरतम प्रीड़ा
नयन अयन नासिका रचाम में
कुच कुल में मादकता धोले
विद्युत् ने अथगुठन खोल

प्रिय ने तापित कर पैलाये
मंजु घोष प्रिय-स्वर मँत्राये
धोली मलखाती हँसती सी
धोलो प्रियतम हीज होल ?
विद्युत् ने अथगुठन खोल

सब सगिनियाँ मुस्काती थी
हुम भी कलिजा चन्नीली हो
सुरभीली धीर रँगीली हो
धों ध्ययो की बौछारा में
वह भी हँस-हँस कर गाती थी

धन्या फलिहा की धारा थी
पति-गृह में वह आई हा थी
मनु-सषय कर लाई ही थी
ननदें करती उपहास किन्तु
वह भाभी सबसे भ्यारी थी

चतुर्थ सर्ग

उसने बाँधे विछुड़े पग में
 धँगाड़ाई के मोहक दर्शन
 जा रहे जीतते अन्तर्मन
 सगीत-पूर में हृष गह
 स्वर ताल भरे थे डग डग में

प्रियतम मर जब आयेंगे
 नारव धँधियारा राता में
 मनुमय उमत्त प्रभातों में
 मन्मथ जनना वरसावों में
 य प्रेम-वृष्टि बरसायेंगे

मद भरी रसीला चितवन से
 अलर्का से, प्रिय धवगुटन से
 हृदयस्पर्शी मुस्त-धुवन से
 कर्तव्य-भू हा जायेंगे
 प्रियतम मेरे जब आयेंगे

जितना छोटी उतनी खोटी
 लज्जा का विच्छुस्त लॉघ गई
 सीमा से धागे टाँग गई
 जितनी बाहर, उतनी भीतर
 कुछ कुछ पतलो, कुछ कुछ मोटी

तुम जान न पाई हो बातें
 उनमें से दा सखियाँ बोली
 मोनों का क्यमस थी खोली
 सींग कटाव की धारों से
 खुद खुद करता करती घातें

मीराँ

मीराँ पर सब यह ताना ह
 लडू कब दिये सगाई के ?
 मूखे ही रहे मिठाई के
 मुख मीठा किये बिना मोचो,
 कोइ गा सकना गाना हे ?

यह बात पते का कह डाली
 बन्धन में बँध कर भूल गइ
 प्रागमन—याद में भूल गइ
 कैसे किसकी लडू दे द
 जब प्रिय के पास रही वाली ?

उ्यों ही ऐसा ताना मारा
 सब लगी ठहाके से हँसने
 संकेतों में कटाव कसने
 सब एक धोर, पर मीराँ का
 भर गया छाज से तन सारा

अब नहीं रही मारों बचो
 विधु का प्रतिविम्ब हुआ नव मुख
 नासिका, हगों के बदल रख
 धद भा सर्वज्ञा सगिनिर्या
 को कह सकती सची सची

ऐसी बातों में चाव हुआ
 बतुल कदुक से स्तन ककश
 उमरे बच—स्थल पर समरस
 पलकें नीची, मयर मयर
 चलने का मनहर भाव हुआ

चतुर्थ सर्ग

यह अथ सुपचाप लजाता है
 उसकी मुस्कानें मधु भीनी
 अधरों में हा सीमित मोना
 प्रिय के अनुराग-सनी अचल
 बाहर कम आता जाती है

स्वर्णिम दीपित वस्त्राभूषण
 धावरयक अग हुए तन के
 अभि-यक्त भाव करते मन के
 रफा चित्रित मुहु कर प्रिय का
 आह्वान किया करत अथ अथ

तन मन में गतिमय अखंडता
 सुदु विकच कुन्तलों का सौष्ठव
 अ-भगों को दता अवि नव
 जघा की स्फीत शिरार्धा में
 नव स्पन्दन, दूर हुए जड़ता

ये शूर-पक्ष का शिव रातें
 जिनके सुदु अचल में तारे
 तहान हुआ करते सारे
 शय्या पर जगती रहती तो
 जाना करता मन का बातें

अनुरालय सं पीहर आती
 जितनी भी नव सुलहिन परिचित
 उनके सम्पर्कों में यह नित
 प्रिय की अनुभूति-मयी बातें
 सुन सुन कर अविरल सुख पाती

मीरा

पीपल षट सींचा करती है
 गर्मी का जलघी लूँ मे
 जब जल जल जाता कृष्णों मे
 चंगारों की ज्यों छाल लाख
 तप कर हो जाती धरती है

तप मे नित दह गलाती है
 कातिक मे प्रात स्नान ध्यान
 मत, नियम प्रार्थना अन्नदान
 उत्तम सुन्दर प्रिय मिले अतः
 मन्दिर म दीप जलाती है

रुम शाश्वत अमर सुहाग मिले
 अम्या-पुनन का ध्यान सरस
 आकपित करता है बरबस
 सगिनियाँ मे हिल मिल गाती
 प्रिय का मधुमय अनुराग मिले

हाथों से दूब उगाता है
 दूबा सा हरा मरा जीवन
 दूबा जैसे फैले परिजन
 चिदियों को मोर कपातों को
 निज कर से अन्न बुगाती है

सावन का मास सखौना या
 घन मालाएँ घन छाड़ थी
 ऊपर अघर में छाड़ थीं
 रिमकिम रिमकिम अमृत-स्वर से
 गुजित घर घर का काना या

चतुर्थ सग

उनमें से एक सखी वाली
 भवकी मीराँ की है घरी
 गा दो कोई कविता प्यारी
 ऐसा जिससे लहँगा नाचे
 दामन टूट बिखरे घोली

सचमुच कविता की यला है
 सयदा हा मुनने को आतुर है
 सत्र मार पपीहे दादुर है
 धन थोर सभी के नयन लगे
 कामातुर हृदय धकेला है

मुम चिन्तन कवि-सम्मेलन की
 मुमको कविता की चाह धड़ी
 पर मीरा अपनी राह पड़ी
 पिय-पय पर इसका ध्यान लगा
 चिन्ता है 'कला बेलन' की

सरियों की विविध छिठोली में
 मारों ने अपना मुख खोला
 भावों का शतदल-दल डोला
 गभार हुई, म्बर मधुर बना
 माना रस पदा निमोली म

परिया का मेला पनघट पर
 कामल मनहर सुर-बालाएँ
 लहरावा स्तन पर मालाएँ
 आती रहतीं आती रहतीं
 मतवाली झूट पर घट घर

मारी

नीरस से पनघट के चक्के
 स्य छटाओं से भाँचके
 रक्षा चित्रित हस्त स्पर्श से
 मृदु रव कर चलते दट दटकर
 परियों का मेला पनघट पर

आनेवाले रसिक जनों के
 जानेवाले रसिक जनों के
 बारबार मयन मँडराते
 कामिनिया के घुँघट-पट पर
 परियों का मेला पनघट पर

सब हुई प्रभावित धन्य कहा
 यह अभी अभी जो गाई है
 कविता क्या नई बनाई है ?
 स्वर क्या है वाष्प मा मनु है
 अमृत रस कविता जन्म अहा !

गायन भा आवा नर्तन भी
 वीणा के सप्त-स्वर अरगत
 कविता रचन में मनुमन-रत
 गारा गोरा मादक मृदु तन
 मुग्ध नयना क कल कतन भी

गुमछो पाकर कृगकृत्य हुए
 तरे चरणों को चूर्मग
 पाध पीछे हा घुँमे
 गुन गृह-जन्मा हा रानी हो
 पर आज्ञाज्ञा तो मृत्य हुए

चतुर्थ सर्ग

पर, सुनते हैं ये काले हैं
 चपला ने सहसा चग्य किया
 विधि ने ऐसा क्यों रग दिया ?
 पर ठीक ठीक अन्या बोली
 ये राधाजी के ग्वाले हैं

इस पर म् यो भाभी बोली
 कलि का तन होता मतयाला
 पर अजि का तन हाता कास्ता
 काले हाते दखे भाले
 मीरों वाली यस हद हो जी

सुन्दर सा गीत सुनाती हैं
 कह कर भाभी यो मुस्काई
 पर मीरों कब भगन पाई ?
 बोली भी दर हुई जाती
 है काम, अभा धा जाती हैं

काले मिय तो सुन्दर सजनी
 सुन्दर मिय तो काली सजनी

सुन्दर प्रकाश काला छाया
 काला मधुकर सुन्दर कलिका
 सुन्दर निम्बर काला कमाद
 काला जलघर सुन्दर धवना

काला किन्पी सुन्दर लजिका
 काला घुँघ्रा सुन्दर ज्याला
 राधा गारा, काल माधव
 सुन्दर निशिपति काली रजनी

धीरी

काल सुन्दरता के लोभो
जगती मैं मितनी वस्तु मधुर
उनका रस ल लेते मधुकर
खीनियाँ वहाँ मिल जायेंगी
मधु होगा जहाँ जहाँ तो भी

बाईजी, यह तो बतलाओ
मीठा मुख कत्र करवाधागी ?
क्या चुपके यों ही जाओगी ?
इस पर अन्या बोली मामी !
वर-गुण गाओ जहूँ खाओ

यह कैसे किसको मधु बाँटे ?
इसकी धोली में दाम नहीं
फिर यभी इन्हें चाराम नहीं
य लायेंगे, तब दे दगी
अब तो इसको ही है धाटे

इस पर चपला की धन भाई
बोली तुम भा मधु की लोभी
मधु-लोभी परदशी धो भी
यह किस किस को मधु-दान करे ?
मकपार रहा मोरों बाई

अपरा ने यों फिर बात कही
पइल ही रालें तो खालें
ये काम मिटाई के काले
पग धूम ज्योंही पर-पग पर
यह बिगड़ी समझो रही सही

धपला ने फिर मारा बाजा
 यह क्यों लोगो को घाटगी ?
 दोने प्रिय क खुद घाटगा
 तुम कान बाघ म हो काना
 नव रहे मिया बाबी राना ?

धन्या ने भा अयसर दग्धा
 बोला ऐसा मालुम हाता
 दम्पति से, ना मैना ताता
 हो गया तुम्हारा समझौता
 तुम दोनों की विचछा रखा

मीरों अधेधित तम्काल हुड
 बस रहने दो ऐसा बातें !
 तुम व्यग्र करो माते भाव !
 उठ पकी शाघ्र चल पड़ने को
 मुख बदला धाँपे लाख हुड

सन्धियों ने हँस कर पकड़ लिया
 हम पर हा तुम अधेधित हा सा
 हम तब जानें उनस बोली !
 भोवी रानी जी रुठ चली
 मन्वो दखा कह जकड़ लिया

अधेधित होने म कारण हे
 प्रियतम की हँसी उदाता हो
 काले काल बतलानी हा
 धपनी तो सुन ल पर प्रिय की
 सुनने म पाप अकारण हे

पतिप्रता घघू का धर्म यही
 प्रिय का चिन्तन प्रिय का ध्यायन
 प्रिय की कविता, प्रिय का गायन
 प्रिय को सयसे ऊपर माने
 नव दुलहिन का सत्कर्म यहा

यह सब कुछ जाने घंटा है
 हाथी क दाँत निखाने के
 हूँ और भार हा खाने के
 यह तो ठहरा तिरिया चरित्र
 सब जाने क्यों यह पेंठी है ?

क्या हाल चाल है सुखदा क ?
 प्रिय का घातें हम करता थी
 तब वह भी घातें करती थी
 रवसुरालय कभी न जाऊँगा
 कहता था सग रहूँ मा क

इम पर अपरा हँस कर वाली
 ह दो मासो स रवसुरालय
 कर रहा आज कल मधु-सन्ध्य
 थोड़े दिन में ही उग्रति की
 उसने तो मर जा है मोबी

सबने मीरा मुष्कान मरी
 नयनों का भाषा तीया थी
 पर मारों मुग्य थी पीका थी
 धरती म गदती जाती थी
 लजिपत पलकें अबजाम डरी

वह कविता जरा सुना दो तो
 मोरा से भाभी यो बाली
 चचल आँखें हँस कर होली
 आआ, आओ प्रियतम प्यारे !
 यह मोहनवाला पा दो तो !

इनको जगती फीकी लगती
 इनका यह ही बस कहना है
 जग में थोड़े दिन रहना है
 बस हसीलिये ये दूर दूर
 ही ऐसा बातों से भगतीं

सब है दुनियाँ से क्या मतलब ?
 नटवर, नागर मोहन गिरधर
 हैं जाम जाम के इनके घर
 यह ता उनपर ही लट्ट है
 य भा हमस विछुड़े हैं क्या ?

कवि का कल्पना निराखी ही
 इनका बातें सिर पैर हीन
 उनमें ही रहते सतत खीन
 ये नहीं समझते रहे उदर
 आहार बिना तो खाकी हां

पर उनमें तो घबतार लिया
 थाइ दिन से घाने वाले
 बस ही सुन्दर हँ काल
 भक्त की पीड़ा हरने की
 उनमें मानव तन धार लिया

मीरी

यातें अब मत निस्मार करो !
अनि जवा काल ब्यतात हुआ
प्रिय हो प्रिय का क्या गात हुआ ?
लोगों को तुम पीछे छोड़ो
पहले अपना उपचार करो !

इसका उत्तर देती देती
मामी बपला से वो बोली
सचमुच ही बहुत अधिक हो ली
होगा विवाह तो इनका तुम
मूठा वाला म क्या खती ?

आओ न चलो मूला मूलों
पर, एक बात है यह झाली
हम नहीं उठेंगी यों खाली
छट्टू न मही कविता ही हा
जिमम मन नम को तो छू हो

कविता मे भी यह है बन्धन
कविता जा हो रसमय ही हो
प्रिय के प्रति मधु-संचय ही हो
पीछा छुड़वाने को गाया
परबश मारों न यों उम्मन

ने हृदयो मे जगमग नगमग
जला आय ह प्रम निवाली

हृदय चाग्र को मन्तरियों पर
नव विलास उल्लास प्रकुलित

चतुर्थ सग

कूट रही है फुदक फुदक कर
धमिलापा-कोकिल मतवाला

दा हृदयां म जगमग जगमग
जला आज है प्रेम दिवाली

जावन क नीरम मरुधर म
नव निटपी को स्नेह-नीर से
घोतप्रोत कर आशाओं की
बही आज स्वर्गां आली !

दो हृदयों में जगमग जगमग
जली आज है प्रेम दिवाली

घोर घार कर विमिर निराशा
स्वयिल शिव अभिनय क्रियाओं से
नवल प्रेम के उदयाचल पर
उदय मनोरम मरोचिमाली

दो हृदयां में जगमग जगमग
जली आज है प्रेम दिवाली

अति दूर दूर उड़ता था पद
सब साथ उठीं फूलने लगी
अलड़की थी सुध भूलने लगी
दो-दो तन जोर लगाव ध
ध झॉक रहे उर घट कटि-तट

मुन्दरगा यों ही लुगती थी
गोरा-गारा निर्मल यौवन
यां मुटा रहा सौरभ उपवन
पैगों पर पैग बझाने जय
कचन-कामिनिपाँ लुगती थी

मीरा

ऐसे ही रहती घड़ल-पड़ल
साथिनें सदा मिलती रहती
घापस में ही खिलती रहती
मुस्कान विलेरा करता घों
बैनी-बैठी पा टहल-टहल

★

पंचम सर्ग

★

ठमनी सी जा रही मीराँ धधू ससुराल
हृदय सागर का तरंगों सा बना उचाल
रा रही थी दूर जाना या नवान प्रदश
परिचनों की भावना में सस्मरण ये शेष

एक धार न्यङ्गा हुआ या मातृकुल, परिवार
दूमरे ध जो वहन की जे चुके पतवार
सौख्यता पोछ निरंतर तन्मय का स्नेह
धम आवश्यक पहुँचना किन्तु पति के मोह

मातृ डीना थी न मा का पा सकी थी प्यार
या विदा का विरह फिर मा-सस्मरण का भार
दूर रह दादस स्वजन, पर दर रहा था टूट
प्रियजना के वचन स विपदा रहा कब छूट ?

रुच न पाया मधुर भाजन धर गया पथ भाल
कह रहा थी बात जयमल से लिए जवाब
दृष्ट में दा तान दिन में हा तुम्हारे पास !
कन्तु कन्तु आता रहा या रा, न या उल्लास

कह रहा मैं भी चळूंगा ही तुम्हारे साथ
 म्मह से अचिराम सिर पर केरती थी हाथ
 वह मही कुछ जानता था उस गमन पर बात
 इमालिये थाकलान्त सा था विलज्ज ज्यों जल-जात
 गूँजता करुणा प्रपूरित था विदा का गीत
 परित्रनों की कल्पना में भावना में प्रीत
 जा रही दुद्विता हमारी आन अपने धाम
 पवन ! तुम रहना सुशीतल शुचि रही उडाम
 धूल से भरना न रहना पथ में अनुकूल
 पंथ निव्वलाना मल्लत यन्ि कही जाएँ भूल
 अरुण्य ! धीरे से उगो कुम्दला न पाय फूल
 अशुभों पर तान लेना आन जलधु-शुद्ध
 पथ का तम दूर करना नभ ! सुनो तुम आज
 अधर्षों का दूर करना है तुम्हारा राज
 रात पथ में हो कही तो शुद्ध है उडुरान !
 शान्ति दना घर-वधू को आर रगना तान !
 चल पड रथ-अश्व चल घर वधू ध मीन
 एक उल्लग प्रणय की थी न जान कोन !
 नांरयाँ दो धार करती थी खड़ी था बात
 ह रदन दुलहिन दिव्या था यह प्रणय का बात
 कर रही सम्भियौ वधू को स्वयंमय उपरश
 देश जैसा घर रखता है परामा दश
 तुम इगें आराम दता एक सखा-काय
 मात्र इनकी चिन्ता ही, आर कुछ न विचार्य
 वह न भा का घर, अधिप का दश मधु का धाम
 धाम भी प्यारी सगरी री ! और प्यारा काम
 और 'आजाजी' हमारी बहिन है अनजान
 भूल हो तो पग्य, रसिये प्रेम पूरित ध्यान

व्यग्य भाता था न उसको हर्ष भी था खेद
 प्राण-धन सहवाम का क्या जानती थी भेद ?
 साधनी थी जगत् की कैसी निगली रीत ?
 आज उसको लग रहे थे भाव सब विपरीत
 कौन पाले कौन पाये, भावना में भ्रान्त ?
 अपरिचित, अनजान होता प्राणधन प्रिय कान्त
 बढ़ रहे थे ऊँट गज ह्य रय पदाति अबाध
 सम्मिश्रित स्वर बना कोलाहल सुमुञ्ज था नाद
 ध रक्षा उद्यान था परिचित पुराना मीत
 झूठे झूठे निरंतर और गाते गीत
 उष रह थे भ्रमर कलियाँ सुध रहा थीं भूल
 तिनलियों से कर रहे क्रीड़ा निरंतर फूल
 बबलरा भुज-पाश में था बढ़ विन्पी गात
 विहग हँस हँस कर परस्पर कर रहे थे बात
 चरल शाखा-भृग सतत अन्धखेलियाँ में जिन
 सैरसो थीं नीर कुर्ने में सुषचल मीन
 पवन के सकेत पर ये नाचते सृष्टु पात
 शंशुओं के साथ मुस्काने नवल जलजात
 हरे भरे प्रसन्न तह की छाँह का सुख और
 मुरमुनें में कर रहे विश्राम सुन्दर मार
 सजल दूर्वादल सघन विधानि का आगार
 दिव्य सौरभ हर रही थी वाटिका का मार
 कुनगियों पर पत्र लदे से झँकते थे दूर
 रविा निम्बर शुद्ध जीवन घाँटता भरपूर
 घोंसलों में गुनगुनाते विहग शिशु सुकुमार
 सुक विसृत ब्याम, सुरमित मद मद बपार
 दूर कुक्ष ही दीम्बता पक्कल अहृत्रिम शान्त
 थी घनी छाया बरों की दूर दूर सुसान्त

मीरा

छहि शीतल हर रही थी चतुष्पद-कुल पाम
 हो रहा भर्तन तरंगों का सुख अचिराम
 कूल पर आ भूख जाता नीर हृदय-प्रवाद
 झलता मन्मथार सिद्धती जब न कोई राह
 दूर आगे थे दितिज के पास टील मौन
 स्वयं धूल सलाम उपमा इस जगत् में कौन ?
 काँक कर दिनकर किरण जय पेंकती मुस्कान
 दीखता प्रत्यक्ष भू-स्वर्गीय स्वयं विहान
 श्चोम में द्यौं जलद जब दिप बल उदुराज
 दस्य प्रिय का नीरसा सारे नयन-तम-मान
 प्राण घन-सदेश सा नूतन मधुर घन-भीत
 हृय विभ्रम नवकध सी हो चल भू प्रीत
 व्यथित सारस स निरतर नवजलतम घनरयाम
 श्रान्त होकर भी गगन म लें न कुछ विध्राम
 निवृत्त आ चुपके स्थिरा क स्वश करत गात
 शौकती विद्युत् हँसैं हृच-तुम-धीर दात
 हस्त-कुच-मदन-सुजाहित, प्रुद्ध सी गतयाम
 भू खगे ज्या स्मर प्रपीडित-नयल प्रियतम वाम
 दस्य प्रिय क पाम भू का बोलत हँस मोर
 व्यस्य म अचिरल चिन्ने प्रसर करते शर
 व्यस्य विह्वल बहिर्घों की केरिघों का हास
 भेदियाँ मुनतीं विदाती विम्बरता उरलास
 बलियाँ नवधावना जब पूल जायें मूम
 पुष्ट चिन्पी स चिपक ताती अघररस घूम
 अनिल-नमर जब जलघरों व मार दता याण
 सुख अलीनिक प्राप्त कर लहीः होत प्राण
 बाघनी अब भागिनी सी न्य भू की रेंगु
 शिव स्वरो न घन-सँपरा प्रिय बजाता पणु

पंचम सर्ग

ताप-तप्ता नीरसा को दिव्य आशा-धूल
 पवन झोटों में मचलती प्रिय भुजा में मूल
 धन-रसा का चेतना प्रद जय मिलन अभिराम
 तय यहाँ क दृश्य कितने भव्य और खलाम ?
 चाँदनी रातों यहाँ की और शीतल प्राप्त
 धूम धूल भरी विमल सध्या सभी कुछ मात
 चल रहा था रथ हृदय क अश्रव भी बलवान्
 सोचता अनजान मीराँ घूमता था ध्यान
 हरित वसना भूमि, अचल में रसों का राग
 चित्तित्त तक फैला रसा का हरा भरा सुहाग
 सस्य कुरमुट्ट म कहीं थे कृपक गाते गीत
 भावना क कल्पना के नये स्वर सगीत
 घोंस के उस पोर से निःसृत धनाहत नाद
 कौन वह, जिमको धवण कर कुछ न छाई याद ?
 य मधुर व गान जिनमें स्वयं पूण विमोर
 चित्तित्त पर रवि झाँकते थे भव्य कैसा भोर ?
 कृपक बालाँ निरतर धी परिश्रम लीन
 पूण गोलाकार तन सन्दर चरण करपीन
 बँल गायँ ले रहे सांठोप की सी साँस
 बरस भरत चौकड़ी, सब घर रहे थे घास
 कृक-कल्पना शप्य धान्य पर
 रट्टु धन माझा सी खहराती
 विस्फारित हग मौन एकटक
 शादलता में ही विमोर बस
 पत्र-काव्य क टूट टूट में
 नय जीवन का भरा मधुर रस
 मानस के शतद्वज पथों पर
 कनक द्विरण करती अटखला

मोरी

नव मरन्द सौरभ विमोर प्रिय
नाच रही अलिनी अलखेली
शृंग शर्फों से रेणु उड़ाते
धनद्वान् शस्यादन तन्मय

भीम गरजते भर छुजांग चल
शकट, क्षेत्र के स्वभ जयाजय
शिव निहार भर प्यार विहँसता
होता मुख से मानस शीतल
होगा घर घर मगल गायन
शान्ध, सुखा अभिराम मदी-तल
सोच साच होता धनुपम मुख
अवतराज में सत्य प्रभाती

गुनगुनाने में लगी थी गाम, वह अनजान
प्राकृतिक प्रिय दरय बरबस खींचते ये ध्यान
किसी झुरमुट से निकल कर शशक जाते भाग
दूर सृंग क झुण्ड करते ये जुगाली जाग
नवल अपने शावकों की उड़ल बूद खजाम
देखते ये मौन मृग कुल हृष से उहाम
वनघरों का किटकिटाना भी जिष्ट आरहाद
प्रतिप्यमित धन दूर तक ही गूँजता था नाद
हँस रहा था समय अंतर में जिष्ट अनुराग
अक्ष का मुकुमार याचन खेलता था फाग
मुफ पणों पर तुहिन क कण रहे ये खेज
वाज-रवि को अशुभों का था अलौकिक मेज
बहिलयाँ ककषी, मतारों की रही थी नाच
पीत फूलों की मनुखता से रही थी राच
कृपक-वाल उड़ा रहे थे पणियों को घूम
स्वर निराला गूँजता था ध्योम का उर घूम

पक्षियों के रव अमर-पुर की सुखद मकार
 सुध-पावस-सरित् को सो कलित, गुजित धार
 गूँजता था किसी विरही के हृदय का प्रान्त
 शान्त त्रिमकी रागिनी पर मूम जाता स्वान्त

जग कहता घन पर हित-दानी
 पर घन अपने लिए बरसते
 विरह-न्वथा से छाप दग्ध ये
 जीवन में पृकाकी नीरव
 नीरव, उन्मन धौर तृपाकुब्ज
 हो जाते सूना लगता भव
 अतराल में तिमिर-ररिमयाँ
 आशा-नीलोत्पल मुद्रित कर
 कृप्यामल्ल सो कण अणु अणु में
 कनक-ररिम को अरुद्रादित कर
 अमर बेल बन सघन फैलता
 धौर वियोगी ये हो जाते
 कण्ठा पूरित विकल स्वरोँ में
 शाप-युक्त विरही से गाते
 हृदय पिबलता धीत्कार कर
 चू चू पड़ते नयन तरसते
 जग कहता, घन परहित दानी
 पर घन अपने लिए बरसते
 पर-पीड़ा से सुखी जगत् की
 किन्तु निराली कैसी बार्ते ?
 घन-दृग-मीकर को कह दया
 राग रंगीली शिष बरसाते
 क्योंकि इसी से ही तो इसके
 सारे सुख-साधन शृ पावे

जिनसे इसको रहे सुभीता
 बस उनसे ही रगता नाते
 घन की गहरी विरह-व्यथा का
 और सस्मरण यन् क्यों जान ?
 कभी चित्त-विषय बन क्यों
 घन क घ घतीत के गाने ?
 घन सो अपन लिप् तरसते
 जन पर अपन लिप् तरसते

साधता थी वह, हृदय गद्गद् बना भावनात्मक
 हरित-नृप निर्मित कुंगी हाथ यहाँ पणान्त
 लो जाऊँ मृदुल धरती पर व्यथा सब भूल
 और आगे हा सरित्-सगम चिरत्न-मूल
 निःशब्द हों स्वर्ग-कुल, हरे हाँ नाद मधु, चम्बान
 गूँजता हो विहग-रघु से सुरभि मय उद्यान
 और फोड़ मान हो बीणा रहे अचदात
 प्रिय सुनें कह नूँ हृदय का मैं मनोरम बात
 दरपन लगती कभी नाइन कहीं विपरीत
 हसी घतर में रासक की पूर्ण होती जात
 हाथ चुपके से द्या जते यद् का मीन
 इस अलौकिक स्पर्श का सुख कह मन्ना जान ?
 उमड़ता था हृदय जिस में प्रणय का ससार
 मान-रूपन लहर से ज्यों धुंध पारावार
 चाहो थ स्वाम्न छु दालें चित्त-क प्राण
 ध्यान के उडु-गण सुनें नदन विपिन की प्राण
 धृद उडुक सी घनी मू का १ था कृष्ण मोल
 कर रंगी थी जनधरि पर कपना बहोळ
 चाहना थी घन में जाऊँ रसिक के लट
 साधत प्रिय मूँ मुजाया में शरीर सम?

दो मिलन-आतुर हृदय में प्रगति का उद्घास
 कामना-सतरंगिणी में घासना का व्यास
 सूत्रधार बना हुआ मन खींचता था तार
 नाचती अभिराम पुत्तलियाँ मत्त मन्धार
 ये नयन नय लाज आती था रही अनजान
 क्षुद्र गति विधि भी हृदय तक खींच लात कान
 स्वद-कण संकित कर दस विपासा भीम
 प्रथम सगम को कहानी अकथनीय, असीम
 प्रिय स्वरित झर्रें बचाकर पृथ्वी क्या व्यास ?
 भूख लो दो ग्राम ल लो फिर सरकठे पास
 हूब चला लान में वह और रहता मौन
 गान धम्य था धराती कौन जान कौन ?

आज त्रिप में शिव किसलय है
 अनुपम सुख गायन मर्मर में
 मादक लय नव नर्तन-स्वर में
 पुलकित प्रतिपल नववय पञ्चल
 शम्भु के अभिनयमय है
 आज त्रिप में शिव किसलय है
 सुरभिष गद्गद् विमल पवन है
 शरणा पर वह विहग-भजन है
 दुम्बर पादाभङ्ग आठप से
 जो पल पल प्रतिपल निर्भय है
 आज त्रिप में शिव किसलय है
 क्षया में अकित मुम्हाने
 गग-विहगा के प मधु गान
 ध्यान हृदय से दूर निरारा
 जावन को यह स्त्रियम नय है
 आज त्रिप में शिव किसलय है

आ गई थी गाँव की सीमा दके गज धान
 आम सीमा धव का परणीय था सम्मान
 उतर कर धीफल निकाले, देवता की भेंट
 हों प्रहपित वर यधु के ताप दें थे भेंट
 दूध से कच्चे तुल्ले धीफल मधुर था स्वाद
 घाँट डाला गया मूट सबको समान प्रसाद
 बात अपनी कर रहे थे घृद और अघेइ
 मित्र गण धर के जगो करने सखा से छेइ
 दव ने भी द दिया आरणीय अपनी प्यार
 अब तुम्हारी धी भरा पाँचों, तुम्हा आघार
 नमक खाया हे तुम्हारा दिन कई भरपूर
 अत मंगलमय त्रिवस हों धर न थे तब दूर
 किन्तु भाभी मेवता की फम न यह भी आप
 मक गिरधर की सुनी कुछ द न डाले शाप
 हम जगो देवर हमारा भी जरा अधिकार
 गई भाभी को हमारी ओर से भी प्यार
 छोड़ते थे मित्र कितने ही अनोखे तीर
 नय वधु मीराँ रही अनजान किन्तु अधीर
 अधिक तीखे स्पर्श में भी था भरा प्रिय प्यार
 मौन थी खजा हुआ अज्ञात हर्ष अपार
 द्वार गृहलक्ष्मी खड़ी थी, आरती का साज
 काण्ट-पीठ ज्वलंत हस्तति से रहा संभ्राज
 मोतियों का घूण, (कुकुम) भाल पर छविमान्
 स्पर्श की कजरी बघाई के सुमगल गान
 पग न पड़ते थे धरा पर नाघते थे रोम
 हर्ष गद् गद् भा, हृदय था बह रहा धन मोम
 लग रह ध आज क दिन चुद्र तीनों लोक
 वध चरणों में पड़ी थी, द रही थी 'धोक

रमणियों धानन वधू का देखती उपहार
 बार बार सराहना करती समूह अपार
 कह रहीं सखियों परस्पर भाग्य की सब बात
 धृमा को चीर कर विधि ने बनाया गात

चाँद सी दुलहिन, चतुर, इतना अधिक उपहार
 दासियाँ गज हय, र्यों का क्या कहों कुछ पार ?
 घा रही जी में कि बैठा लें वधू को पास
 नासिका, भौहें नयन, मस्तक अधर स्मितहास ?

नाम भीरों नीरजा की मुकुल सा अमिराम
 बाल-रवि की अशुर्भा के जाल सा छविधाम
 फन सा उज्वल मराल-कुमार-धनु-समान
 मुग्ध पायल पलधरों का सतरगा गान

केरा सावन धीर भादों की तमी का सार
 कुन्तलों के भ्रमर ज्यों सर में तरंग-विहार
 शीशफूल, विभावरा में तारकों का जाल
 वणियाँ, ज्यों शेष की मिय पत्रियाँ विफराल

माल की विन्दा स्फटिक के अरि में ज्यों दाप
 कर्ण-सप्त स्वाति में ज्यों तैयारी हों क्षीप
 कर्ण की मणियाँ प्रहों की किलमिलाहट दूर
 सतराय ज्यों मीन का मरुधर में भरपूर

मनु भौहों में पवन उनचास का उल्लाम
 इन्द्र के नन्द विपिन की सुरभियों का ज्वाण
 नयन की धामा गगन में चन्द्रिका का न्यार
 नासिका में स्पष्ट अक्षि शुरु गन्द की हार

नयन-कार तुहिन-र्यों की दह क शूट बाल
 नारु-मुफा हम दोँ ल धनु-शेष गुणाल
 अधर पलदल-रगवों का अनगल उन्माद
 दत-अवली संगमरमर का मधुर धारहाद

हाम्य, सुरपुर अप्सराओं की अनंत उदाम
 मरुर घायी में शिवगरी का अलाविक शाल
 मुक्त जिह्वा, अरण्य उरपल तल विहारी पाव
 धिषुक, धी-कल के हृदय सी सबल सृष्टु अवदात
 गोल-गोल कपोल ऊपा जालिमा ज्यों भीम
 सुषद मुण मडल उदय ज्यों पूर्णिमा का रोम
 चार अंगुठन, गगन में जलद ऋषु विनान
 कम्पुना मोवा, अपल शावरण का अभिमान
 बाहु मडल कल्प तरु-शाखा-नमन सुशील
 कामत जिसक पाश में भू-स्वग जाये दोल
 गीण किचित् स्पर्श भी हिम-अद्रि जैसा वास
 बार-बार लपटने पर भी न जाती प्यास
 वलय में गंधव-कुल के नतनों का नाद
 स्वर्णमय भुजबध यौवन के तृपित उम्माद
 सुदुल अगुलियों कलाधर-सुखिया-समुदाय
 अगुलीय प्रभा-पताश दिव्य-भ्योति निमाय
 हस्त की अन्तस्थली कोशेय के स्तर पीन
 चार रखाएँ सता के तन्तु-वाल नयीन
 मेहदी नर-जालिमा में प्रणय का अनुराग
 कर सुझाओ का मनारम कखा पूर्ण विभाग
 स्कंध युगल मरालिनी की पाँख क्ष चित्तार
 कम्भाला कीमुदी की आत्मा का मोर
 मीच्छिओ का गुण्य मानस के हृदय का नीर
 तार कीर वहुटिया का तन लिया हा पीर
 स्तन दलकत स सुधा के कुम भी कपार
 विरवभर के काननों क सुमन रम थाधार
 जलधरो क प्राण, दीवम-पूण क संकेत
 म-कुल काटिन्य सनीवन-जबो क शत

रक्त हीरक से भरे हों कलश ज्यों कलघौंठ
 व्याम धोर उतावट उद्वन यथा मुकुपोत
 विल्व टिपी पर लक्ष्मि ज्यों नव्य फल विन्तीर्ष
 पाम पास विभक्त ज्यों धीफल मधुर उत्तीर्ण
 अग्रभाग रसाल-दल पर हा मधुर गजार
 तुंग टीलों पर करें ज्यों कृष्ण हरिण विहार
 बीच अन्तर-श्रान्त में प्रिय सरित् सा भूभाग
 गूँजता पाने तिसे शय-लाक का अनुराग
 एक सृष्ट कपन हृदय का भूमि का भू-चाल
 स्वप्न-श्राद्ध माधवों के हर्ष का ज्वाल
 कश्यपा अमरावती की फाकिला के गीत
 हर्ष क्षुब्ध-समुद्र मथन में सुरों का जात
 कामना अमरावत्या में व्याम श्री का रास
 मात्र नीरज मुकुल में शत मधुकरों का घास
 राग सरनिन-नाल में नव नाभिजों का स्वान्त
 बुद्धि, अगणित श्लिष्टों की अशु का मध्यान्त
 मावना-अभिव्यक्ति मन्दन्तर-अयुत-ससार
 सत्य अनुभव कथनों का अस्मिन्मय आकार
 और धृष्ट धीर-सागर के हृदय की धाढ़
 काम स्मर के पुष्प-वाणों की सहस्रों दाढ़
 एक उत्कृष्ट अगस्त्यों का पिपासा-ताप
 साय रिमझिम विन्दुओं का मधुरतम आलाप
 प्रेम-नतित विद्युत् का निम्नरी के धार
 शान्ति सुरधनु के हृदय के परिष्कृत उद्गार
 धालिका शृंगार-रस के रग का विन्तार
 दामन कादम्बिना की धाढ़ का सघर
 धार कृष्ण की प्रिय धृष्ट में कला का हाय
 श्रुतल यत्नतम नित्यों पर सभी नवमाय

मीरा

करधनी, ज्यों गङ्गा ने गोमती निष्कान्त
 दिव्य अक्षर-पट नवल कवि का मधुर एकान्त
 जाँच में ज्वालामुखी के स्पन्दनो का भास
 शृङ्खलुनाइ स्नेह का ज्यो कदलियो स ब्यास
 गोल पित्रलियाँ शची के हर्म्य की सोपान
 नूपुरों में, पायलो में विश्व का शवमान
 नाग सी गति शमरु में पधमान का शृङ्खल
 पूर्ण नख शिख, रुक चल सब विश्व का ब्यापार
 भाल गयोँ अत, यया आराश में हिमवान्
 कुच-कलरा से फटि-तटों तक शिव त्रिवेणी-तान
 कर युगल प्राची प्रतीची के सुरम्य विभाग
 लक के पश्चात् सागर की सुधा का राग
 कर रही थीं समययस्का नारियाँ उपहास
 सास से जिसका हृदय था छू रहा आकाश
 तालियाँ अब नव वधु को सौंप ले सब दाम
 तुम करा अब राम राम विलम्ब का क्या काम ?
 यह न दाँडगा भइ यह यही चिप्पू वाम
 धाज भा इसका हृदय कब चाहता विधाम ?
 पृथ होने जा रही पर मन न बूझा जीयों
 कामना पर राख म यह सर्वश्रेष्ठ प्रवाण
 बाँधना चच्छा किसी का घर रही तुम लोक
 ना बहिन ! तुम तो कल्पि न कार्य देना छोड़
 यह नहीं आचार्य नगर का सभा बुद्ध दोष
 मन नहीं उनका त्रिने मूट लेते कोरा
 आपका कसे पता जी ! मनचले ये चार ?
 इस घरेलू बात में पण्यत्र काइ घोर
 वे रद नगर इधर भाभा छ्योला नार
 ज्ञात होता सारिका शुक व हुण दग चार

भाभियाँ वर की उधर यो कह रहा भी बात
 चाहती मिष्टान्न कर देंगी नहीं उरपात
 यह हमारे बात बस की है हमारे दाँव
 आज दवर ची ! हमारे पूँय होंग पाँव

एक भाभी ने कहा यो बात यह निस्मार
 पूजकों का फोन दता है यहाँ उपहार ?
 भक्त जब पडुचे हुए भगवान आगे ब्याप्त
 बीच में पडे कभी क्या कर सकें कुछ प्राप्त ?

एक भाभी ने क्या तुम मिल गई क्या आज ?
 खार में मूसल पड़ेगा है हमारा रात
 कुछ न परने पद सका तो ये करेंगे याद
 वह हमारा बन्दिनी हम का करे आजाद

कोमिला त्वर छाड़ कर सुन रहे ह काँव
 गुरु सहे, गोविन्द भा किसके पदूँ में पाँच ?
 सोचत है एक भाभा ने चलाया सीर
 हँस रहा यो भाभियाँ दवर घमद अघार

साचली भी बढ सी मीराँ धधू अनजान
 आज कैसे कर सकूँगी ध्यान गिरधर-भान ?
 धार जपमल फोन जान रो रहा या शान्त ?
 कुछ यहाँ न अत्रिष्ट होव है प्रभा ! मन भ्रान्त

★

षष्ठ सर्ग

★

श्याम-मलोने तन पर शोभित
अरुण शटिका अभिनव
रक्त नयन इंगित करते पी
रक्खा पौवन - भासव
अतमन - टह्लाम - पशुता
से प्रिमका पुलकित तन
मत्त मतगज सा मदमाती
आती रमणी नूतन
अपने विस्फारित नयनों से
भोर दलते चिन्तित
गमनशील अपने भावासों
के उन्मुक्त ही सीमित
अपने अपने मोड़-पुट म
धैट नीरय नमधर
बनलाओ तो कान कान यह ?
पूछे प्ररन परस्पर

पष्ठ सर्ग

उड़ी शफों से नम मडल म
 धाई मिटी मैली
 कौन था रही पूछ रही ह
 निज निज धेनु-सहेली



वामल-रमणी की प्रिय छवि पर
 मोहित तर अनजाने
 विहग-कुलों के प्ररनोत्तर पर
 ध्यान - मग मनमाने

पुष्ट उरोनों के दर्शन से
 जिसके रोम प्रहर्षित

धूम्र पान कर नम-रमणी को
 धूर रहा आकर्षित

नय सध्या माता की ध्वनि के
 साथ जल उट दीपक

घटा - नाद समाप्त हुआ तो
 भक्त - जनों की धरुचरु

सध्या को पहिचान विहर्गा
 ने की पत्ने निश्चल

हरषर चिन्तन में धृति तमय
 हुए मूँद कर हग चल

मौन दग्ग निज आश्रित उन को
 तस्थ्य प्राद, सप्त नूखन

ध्यान-लान यागा स नारव
 हुए चिन्प चिन्तन मन

दग्ग सपनो मान रजना
 विधु विरह से हो रही क्यों ?

मा दटा शृगार स रे !
 दग्गना स व्यधित चिन्तित

मीरा

कृष्ण घण्ट में क्षिपा मुख
उन्मनी हो सो रही क्यों ?
दख सजनी मौन रानी
विधु विरह से हो रही क्यों ?

मिलन - हय - प्रगाद - निद्रा -
स्वप्न में छाया अंधेरा
धिर निराशा से प्रबल -
उहाम वर का धो रही क्यों ?

देख सजना मौन रानी
विधु विरह से हो रही क्यों ?

भावना के खेत से र !
सुख ससृष्टियों प्रणय की
घण्टता उन्मात् पावन
कथिक धों ही खा रहा क्यों ?
देख सजनी मान रानी
विधु विरह से हो रही क्यों ?

अलहद घघन दुःखहिन नीरों
ज्यों प्रकाश की छाया
शिशिर-ममीरण-दोलित जतिका
सा गति-समय काया
प्रियतम-भोहक-पीन-वध की
भायमपी अंगबाई
छुई-मुह की कोमल शाखा
सी पलकें सजुआई

मृन्म-विभा शिखा से मन की
स्वर मानी अभिलाषा
प्राप्त-अद के मण तोर भी

पष्ठ सर्ग

महा अग्नि की कुण्ड हिलारा
 सा लिप्साएँ आती
 धूप - धतिका धूम शिखा सा
 उर सुरभित कर जाती
 मरीचिका में सृग शावक ज्यों
 चितन धति भरमाया
 दूर-दूर के दा हृद्यों में
 एक गात लहराया
 प्रणय-कथा में भूज रह ये
 नूतन साजन - सजनी
 महा निराशा ध्यान या मत
 बैठा थी सुप रजनी
 मन-अपर में धारा - पड़ो
 कभा-कभी उड़ जाता
 निरस निराशा विमिर धगाएँ
 पाछे ही मुह आता
 दीध साँस ले नम शय्या पर
 शिथिल हुईं पछताईं
 मुरझाया था दिव्य मनाहर
 ध्यान ज्याति न छाई
 धाय-धन्द्रिका से हर्षित मुख
 नय रजनी-पति धाये
 प्राण-धरलभा को पाया
 धनि निद्रा में भरमाये
 मान प्रेरणा से निशिपति न
 मयर धरण धड़ाध
 रजना-पति को मुग्ध जान कर
 चारे मौन क्षणाय

तुहिन दिव्य कण मुक्ता-म्र पिल
हरी दूष का प्रांगण
बिखर रही थी मुक्त बहरी
पिसमें प्रिय आकर्षण

सरल, नवल मशुल हरीतिमा
पीवर तन में भासित
सौरभ चारा घोर ब्यास थी
धूम रही निष्कासित

सुन्दर थी बह घला नम में
झिङ्क गई थी चन्द्रा
हँसती थी रजनी, कदिका की
दूर हो गई तन्द्रा

स्मित-भ्रानना अपल शैवक्षिनी
रह रह मुस्काती थी
बिखर रहा उल्लास चिरतन
नय लहरें गाती थी

निशीथिनी के मधुर हास्य से
सब निरराब्द विहग थ
शैवक्षिनी की मधुर तान से
नीरघ स्तम्भ विटप थ

सजनी इपिठ क्यों अतस्तल ?

धौवन का मधुर मधुर स्पन्दन
अतर् से अतर् का यधन
बाहों में बाँधे तन में तन
स्वणिम मधु सपनों में कलरव
मन धिरक रहा हूँ क्यों पल पल ?

पष्ठ सर्ग

सफुल्ल पाटिका तुल्य हृदय
जिसमें सुदु किसलय ही किसलय
मजरियों का मादक अभिनय
जलधर मराल-दल पर चढ़कर
गद्गद् हो जाता क्यों चंचल ?

रजनी क सुंदर ठार्रा म
विधु के कमनीय विहारों में
शैषलिनी की झकारों में
आकषण नया नया मधुमय
प्रिय क्यों आमंत्रण का अचल ?
मैं गाऊँ तुम सुनती जाओ !
उद्यान विमल, नम प्रांगण में
उड़ धर कभी, उड़ उधर कभी
तिनके सुदु नीड़ बनाने को
मैं झाऊँ तुम सुनती जाओ !
यों उसे रिझावे ये प्रियतम
मुस्कात ये य पुन पुनः
मैं अपने मन की कहूँ सभी
तुम पुन पुन कर सुनती जाओ !
हम जीवन को कृतकृत्य करें
हम नृत्य करें रमरुम रमरुम
तुम चपला नर्तित अग अग
मैं यर्षा-मुख घन सग सग
तुम निरु रिणी मैं शल श्लग
मैं इन्द्र-धनुष तुम त्रिविध रग
तुम स्वर्ण उपा मैं घन विरग
तुम जलज मुकुल मैं विरल भृग
मैं व्यथित हृदय तुम नव उमग
तुम मधुर विपची मैं शृदग

भीरी

तुम दीपित मणि मैं विप भुजग
 मैं सागर तुम बनिल तरंग
 तुम ज्वाला मैं निर्मल शकुलिंग
 तुम सुग-नृप्या मैं चल सुरग
 तुम मैं मैं तुम तुम मैं मैं तुम
 हम नृत्य करें रमरुम रमरुम

सुधसुध भूल कहते य प्रिय
 जैसे भावाकुल घन
 नये अपूर्व अलाकिक सुख मैं
 तन्मय मारों का मन

कितना मादक कितना सुन्दर
 कितना मधुमय जीवन ?
 मम की इच्छा यही सदा हो
 तुम मैं फिर मधु जीवन

जीवन में मधु भरा न हो तो
 पाय रहेगा खाली
 अवर का जीवन नीरस यदि
 हो न खर्गों की जाली

अदिल अराधर हा मधुमय है
 मधुमय जग का क्या क्या
 पान वाले हा पाते हैं
 सुधा बरसती पय पय

वह उदान नहीं है जिममें
 सुमनों के घाट हों
 पत्ते मूखे विखर रह हों
 बटल हों बट हों

पष्ठ सग

कोटर में फलरस न रहे तो
नीरसता फायेगी
सुन्दरता, मृदुता हरियाली
कैसे रह पायेगी ?

नव रसाज का मजरियों पर
कोटिल का मधु कृजन
मधुमय अभिनव जीवन का ही
होता है नित पुन
अलिर्या की गुनार वही है
कलियाँ जहाँ विकसती
मधु द दर्ती मधु ले लेती
सतत हँसती, हँसती
मधु का क्रय विक्रय ही जीवन
पर हावे समयता
बधन क्रन्दन व्यथा न होवे
पाने की निभयता
याँवन के सुन्दर प्याले में
मादकृता का नर्तन
अपिन्न घराघर की आकुलता
क का का परिवतन
रीति निराली ह यावन की
याँवन स्वयं निराला
याँवन के प्रत्येक भास में
मरी हुई है हाला
उस हाला का मधुवाला को
जो नर पा जाते हैं
उनका जीवन तूत जगत् में
लाट नही आते हैं

मीरा

नव यौवन की गलियाँ हों का
 निनको स्वाद नहीं है
 उनका जावन हा निफल है
 कुदु आह्लाद नहीं है
 यौवन जिसमें कालरूट भी
 अमृत ब जाता है
 हत, हत पर यावन थोड़े
 गिन ही रह पाता ह
 यौवन चचल षणभगुर ह
 अघड़ सा आता ह
 जिसमें मूम मूम कर मानव
 अन्धा हा जाता ह
 अया की लाली मा जीवन
 पुम्यन सा यौवन ह
 अलि क गुजन मी सन्मयता
 दुग - शृण्वा सा मन है
 आधो आधो यों न गँयाधो
 थोड़े से यावन को
 छोड़ चला जायेगा यों ही
 एक दिवस इस तन को
 अभिनापाएँ तृप्त रह तो
 जीपन मुरग पाता ह
 नहीं चिन्तना यम आती है
 भूमा रह जाता है
 भूरो जीवन की अभिलाषा
 मूस - मूस विहाती
 एक बार की भूय निरंतर
 सा सा भूय जगाता

तृप्ति नहीं तो जीवन कैसा ?
 यौवन भी जीवन का ?
 प्राणवह्नमे, चलो बसायें
 नया जगत् हम मन का
 इस तृणज्वाला से जीवन में
 क्यों श्रवमाण बसायें ?
 मधु है प्याल हं पानक भी
 क्यों न इसे पी नायें ?
 जग भौतिक है नाशवान् हे
 सत्य दूसरा जग है
 जो यह कहते भ्रम में हं घ
 निराधार नम-जग है
 मिथ्या पर सोने की फलह
 घ झूठी करत हं
 यावन बाल उनके पीछे
 पीछे कब मरते हं ?
 जो मधुबाले मानव उनक
 पीछे हो जाते हं
 जीवन मर पड़ताते रहत
 घम में खो जाते हं
 जिनकी भौतिक अभिलाषाएँ
 होती तृप्त नहीं हं
 मिथ्या कल्पित अन्य जगत् में
 हाते लिप्त यही हं
 कैसा विमृत मधुमय जग हं ?
 इसमे परे म काई
 इस जीवन की अभिलाषाएँ
 यहाँ न जाएँ ढोह

मोरी

तूत मनुज ही धन्य लोक की
 क्षिप्तार्थ करसा है
 हम भातिफ जग से जब उसका
 हृदय नहीं मरता है

जब अधक सा ही जीवन को
 धा क्यों इसे गँवाये ?
 क्यों न जीन होवें असीम में ?
 जीवन सफल बनाये

वचन में कुछ ज्ञान न होता
 व्यथा अवस्था दलती
 जीवन में कुछ करे नहीं तो
 इच्छार्थ कर मलती

एक मनुज ही सत्य रानी पर
 यह विचार सुंदर ह
 पर वह नभ नू शत्रु सूर्य क्या
 रच सना जा भर ह ?

उस असीम की पुनर रचना
 कर ना कह सकते हैं ?

स्मरण रह विमुक्त गित पर
 हम सब बह सकत हैं
 जिस दिन मानव तृप्त बनेगा
 जग यह जल जायेगा
 उसक अहकार का भ्रंश
 सब का मल नाशगा

पेनी समयता, अलङ्कता
 भीमा भ्रंश करती
 मोह-वृष्टि से दिवक को
 तन में हँका करती

भौतिकता से विमुख नही मैं
 पर वह नही सहारा
 वह तो साधन साध्य नही वह
 वह क्या लक्ष्य हमारा ?
 नरवर तन की चल हृष्ट्याएँ
 मन को खींचा करती
 काम मोह मद शोष क्रोध से
 जीवन खींचा करती
 जो द्वियेक की तन्मयता में
 डूब नही सकते ह
 य इस भौतिक नजर जग से
 ऊंच नही सकते ह
 नल-कुम्भो के प्रतिविधा का
 हम अस्तित्व मानत
 जिसके ये प्रतिविध ७ उसको
 मूलाधार मानते
 जिस स्त्रचा में स्वाद मिला वह
 ऊपर नही यद्देगा
 फल फूला धे लिए विदप पर
 ऊँचा नही घग्गा
 वह कह दता दुनियाँ भर का
 सब ध्यान यहाँ ह
 और साधता जग में केसा
 मधु मकरद कहा है ?
 पर जानी ऊपर चढ़ जाते
 पल मात्र स्वास ह
 पण डालिया स्त्रचा नरा भी
 नही सुमा पात ह

मीरा

म गिरधर को इस दुनियाँ स
 ऊँचा माना करता
 उनसे ऊँचा नहीं किसी का
 भी मैं जाना करती
 मीराँ सोम निहार रहा थी
 प्रिय मीराँ क मुख को
 ये विषक से आकर्षित थ
 मान गये थे रख पा
 बोल थ गवगद् मुस्का कर
 धाधा हम खिल जायें
 हुन विरक्ति हो और भोग म
 एक साथ मिल जायें
 मीरा पति के प्रति गवगद् थी
 थ मीराँ स हर्षित
 पर दूसरे का तन प्रतिभा
 करते थे आकर्षित
 चाँद गगन में घटा छाया था
 सुन्दर था भाता था
 सौम्य हरम था दोनों का ही
 हृदय पिघल जाता था



सप्तम सर्ग

★

निज रग-महल की छत ऊपर
सब कुछ निहार भारों खचन
जम बैठ गई रुक कर धरु कर
कुछ मोच रहा था अतसल

वह स्थल था सुन्दर जिस पर मे
सब ही दिवलाइ पड़ता था
चारों कानों का हरय सुख्य
नयनों में स्पष्ट उमड़ता था

प्रिय भी समाप धामील हुए
बाल वह स्थान मनाहर है
वह दर रहता था यत्र तत्र
घाला हों मचनुष सुन्दर है

उमा हाता है ज्ञात मुझ
जावन में पड़ना खड़ना है
या खना-पड़ना ही जीवन
धरु धरु कर धारो खना है

मीरी

बोल प्रिय एसी बात नही
 जीवन बदना ही बदना है
 पढ़ना जीवन का ध्येय नही
 आगे आगे ही बचना है
 जो नीचा होगा नही कही
 कैसे ऊपर चढ़ सकता है ?
 जो पीछे होगा वह ही तो
 आगे आगे चढ़ सकता है
 छोड़ो भी एमे मगड़ को
 हे ख्यय उलझना घाता में
 देखो ता दूर छुटा कसी
 पदत के मनु प्रपातों म ?
 बल वनों चल जायेंगे हम
 आगेट करेंगे जी भर कर
 दाखा क प्याल ढालेंगे
 रस म भीगा गूजेगा रस
 शशरी तरिणों का मास मधुर
 दामा म चढ सेंकेंगे
 मरमा का पीयेंग पानी
 फिर हरय अनाखे देखेंगे
 चलने को मन हा तो बाखा
 तुम साय-साय चल सकती हो
 अन्यथा यहाँ घटी-यगे
 पूकाकी कर भल सकता हो
 मैं नही समझ पाई क्या यों
 जावों का हत्या करते हो ?
 क्यों अग्याधारो पापों मे
 जीवन की माली भरत हो ?

नावों को सवा मार कर क्या
 कोड़ कुद्द मुग्ध या सकता है ?
 हठियों मास, शोणित र्म क्या
 कुद्द स्वाद कमा घा सकता है ?
 जैसे हम घैस घ भी ह
 घमिलापा घाशा रसठ ह
 सुख-दुख आद्गाद-दर्प सघ हा
 का स्वात् निरतर चखले ह
 सघ ठम असीम की रचना हे
 सघ ठमक हा ह घरा भिघ
 उनकी हत्या, घपना हत्या
 हमने होत त्रिभु सदा स्त्रिघ
 तुम लाग मनोरजन करते
 उन पर पीड़ा घा जाता हे
 कसी दुनियाँ ह जावा का
 पावन हर घर मुस्काता हे ?
 काइ तुम लोगा का मारे
 ता क्लिना जा दुख पाता हे ?
 घाटी स लनर हाया एक
 णसा हा सघ का नाता ह
 घ जीव कहाँ रहत होंगे
 त्रिनक मुधिया मारे पात ?
 घ कहाँ पितात होंग दिन ?
 किसस कहत दुख की घाठे ?
 जीवन की सुन्दर यला में
 क्या यह ही करत घाये ह ?
 मौतिकता क चहर र्म पद
 क्यों पता नहीं भरमाय ह ?

मीरा

क्या यह हा आगे बढ़ना है ?
 क्या ऐसा ही होता जीवन ?
 क्या यह ही ध्येय रहा करना
 शोषित-भदिरा से पीवर तन ?

एसे तन की एसे मन की
 कितनी कुत्सित अभिलाषाएँ ?
 ऐस नर की हाती होंगी
 कैसी गर्हिततम आशाएँ ?

यह दुनियाँ है इसमें कोई
 कुछ बोल : ही जो मकते हैं
 मारे जात वे स्वतंत्रता
 का माल नही चख सकते ह
 दूसरे जना की आशाएँ
 कर नए रफ जो पीते ह
 य ही जगती के अधिभारी
 सुरापूषक य ही जीते हैं ?

यह सुरा-पान जो कालभ्रू
 जीवन का रस हर जता है
 निर्मल विषक को शत्रु को
 तममय कुरूप कर उता है

मन्त्रिा क मादक प्याल में
 दानवता नतन करता है
 प्रीयन क सशिव सुन्दर में
 नगा परियतन भरता है

पर रोद रद मानय उसका
 मनु मधु कह कर धिशाता है
 तम के अंतर् म धैम कर भी
 यह उसक ही गुण गाता है

तुम भोली हो घर में रहती
 इन बातों को क्या जान सको ?
 सुगन्धा के सुख धपकों के रख
 उसे क्यों, क्या पहिचान सको ?
 हम ही क्या इत्या करते हैं ?
 जग ही सारा तल्लीन शुभे !
 अपना तद्भाग उसमें देखो
 क्या करती रहती मीन शुभे ?
 घर की बिल्ली का ही देखो
 पृथ्वी पर भ्रमण करती है
 पेदा पर लुट छिपकर, घट कर
 विहगों का जीवन हरती है
 उम्र बिल्ली पर भी तो निशिदिन
 कुत्ते ये साक लुगाते हैं
 आनों के कितने ही घातक
 घातक भी प्राण भँवाते ह
 तुम भ्रमण खोल कर देखो तो
 यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है
 चुपचाप तपस्य बने रहना
 जीवन की दुर्बल अदृष्टता है
 जगता में यदि जीना है तो
 या रहा नहीं संघर्ष करो !
 लट पर न रुको मर स्वरित उठो !
 अवन सहरा का स्पर्श करा !
 यह जीवन है संघर्ष भरा
 जा जितना धर्म्य करते हैं
 जीवन उपवन में असुरत का
 अतना ही धर्म्य करते हैं

मीरा

'माखी-हत्या' खोजी मीरा
 सधों की परिभाषा है ?
 स्वायांघ जगत् के अन्तर् की
 यह कैसी कुत्सित भाषा है ?
 कह तो देते अभिमान लिये
 हम मानव हैं मजसे ऊँचे
 वैसा हथर क्या पाप पुण्य ?
 हम ही सब बातों में पहुँचे
 पर, अपने पाप छिपाने को
 कुत्तों की उपमा दते हैं
 ऊपर विद्वत्ता की धारा
 भीतर शोथित वी लते हैं
 यह सुरा मांस का सम्मिश्रण
 व्यभिचार बढ़ाया करता है
 श्री का सतीत्व कुछ दुकड़ों पर
 जिससे सुट जाया करता है
 ये दासो कुलटा बेर्यापूँ
 नगा विक्राम व्यभिचारों का
 ये सुरा-पान का दन गद्य
 कुत्सित फल पापाचारों का
 व्यभिचार, गात्र विष-कर्म्या का
 ऊपर से मन हर लेता है
 मधुमय जीवन क कण-कण में
 पर कालकूट भर जाता है
 पापों को प्रोत्साहित करना
 आत्मा की हत्या करना है
 आत्मा-विहीन पशु ह दानव
 पीड़ित रहते भी मरना है

सप्तम सर्ग

यह पाप एक जिसको ठकने
 सौ मूठ बोलनी पड़ता है
 जलत घूँसह पर काष्ठ उखा
 पर एक बार हा घड़ती है
 मुनती हैं, मानव यह जीवन
 कठिनाई से ही पाता है
 घौरासा जार योनियाँ में
 वह घूम-घूम थक जाता है
 पापों का, पुण्यों का नियम
 भी स्वयं धाम में हाता है
 जो जगता वह कुछ करता है
 जो सोता है वह रोता है
 पति बाल, रहन दो प्रवचन !
 तुम काम करा अपना, जात्रा !
 इन उपदेशों को रहने दो !
 गृहिणी हो घर पर भँडराओ !
 नारी ता मर भी शक्ती है
 नर क दुर्कर्मा पर पलती है
 नर क इगित पर जीवन भर
 कठपुतली का ज्यों चलता है
 चक्री घूँसा चौका वचन
 को के जीवन का माया है
 सतान जनन का यत्र पुरुर
 की अनुगामी वह दया है
 मीरा नागिन सी भुँभलाई
 नारी का जागा स्वाभिमान
 य मयन धर्या खा गई बुझा
 हा गया स्वयं हो ज्याँ विहान

पर अघ-पतन उसका १७०१।
 उसको नर कामी छलते ह ।
 बचपन की माता की याते
 मय युगपत् गूजा कार्ना में
 था साच रही यह आरम इनन
 क्या छोड़ खल सतानों में ?

अतर् कहता था उठा उठा
 तुम नारा हा जग-माता हो
 जागो जागो चेतो चेतो,
 तुम ही ता जग की प्राता हो ।

तुम जिधर धरोगी परख उधर

समार घूम यह जायेगा
 छ-भगों का इपन् इगित
 भू-कप हूँ ल प्रायेगा

नारा अपन को पहिचानो
 तुम ही ता भाग्य विधाया हा !
 तुम ही जीवन आधार मूल !
 तुम ही ता जग-निर्माया हा !

जग नष्ट भष्ट हो जाता तुम
 हाता न अगार तुम अदा हो !
 विरयास बरपता भापुक्का
 तुम ही तो तुम क्या बढा हो ?

सप्तम सर्ग

वह उठी और चल पड़ी मौन
 उर में विरवास झलकता था
 नारी का क्या सचा स्वरूप
 आकृति से स्पष्ट भक्तता या
 प्रिय ने उसका कर पकड़ लिया
 तुम कहाँ जा रही हो ठहरो
 मैं नहीं ठहरती क्या मतलब ?
 जो जी में आये वही करो !

मैं नारी, मेरा तिरस्कार
 होता कट महा भयकर है
 मैं शक्ति सिद्धि भी, शान्ति जमा
 मेरा स्वरूप प्रलयकर है
 मैं जागूँ तो जग जाग पड़े
 मेरे सोने पर सोते ह
 मरी मधु मुस्कानों से ही
 ये लोक प्रफुल्लित होते हैं

वह कालजट वाला शकर
 मेरे अभाव में रोता है
 यह विष्णु स्वयं नगदीश मदा
 मेरा गोदा में सोता है
 मैं प्रोषित होकर नाचूँ तो
 नगती मैं हाहाकार मचे
 मैं अग्नि नाश की ज्वाला हूँ
 जल उठने पर कुड़ नहीं बचे
 नगता क सारे रक्तपात
 मेरे इंगित पर होने हैं
 मेरा विधिन् मीरसता से
 रावण दुर्याधन राते हैं

मरी आँखें खुल गई आज
 निद्रा में यमुध मोती यो
 अपने हा सुप्त-सुप्त हर्ष-वष्ट
 से अखिल हसती रोती थी
 मेरे समान हा कोटि कोटि
 जग-निमात्रा पद धूल बनीं
 उनके चिर बन्धन काटूंगा
 इच्छाएँ होमूंगी अपना
 मैं एक बूँदा तो आग
 पाछे सब ही बूँदा जायेंगी
 सरीण परिधिया से उठ कर
 हेमाचल पर चर जायेंगी
 तब संसृति का यह मरक कष्ट
 मधु असुत से भर जायेगा
 कल्पुतली दासा छाया का
 कुम्भित सपना मर जायेगा
 प्रिय बार बार यो कहते थे
 दादो मय सुन्दर गात करा !
 पागल तो नहीं हुईं भूलो !
 मत यों तुम प्रथित गात करा !
 दस्ता यह भिषमगा शरर
 तरे अभाव में राता है
 चाभो लक्ष्मी इन्द्रिा हैसा !
 यह विष्णु अक मैं साता है
 कह कर यां प्रिय न अपना तन
 उसक घुटना पर बाल निया
 यह हैसा जरा, प्रथित सा थी
 उनका तन खरित सैमाख द्विया

प्रिय कहते थे अनुनय-स्वर में
 तुम बातों में चिढ़ जाती हो
 कुछ कहीं व्यग्य में छेड़ दिया
 तो गुस्से में बतलाती हो

साजन-सजनी की भी होती
 क्या कोई पही लड़ाई है ?
 मेइतनी का साराश मूर्ख
 सचमुच काशिक की ताइ है
 पागल तो कितने ही देखे
 पर तुम उन सबकी माता हो
 तुम जग जननी हो ज्ञाता हो
 तुम महा मूल निर्माता हो

देखा जी छेड़ रद हा फिर
 पहल तुम बात बनाते हो
 फिर भाति भाति का विनय लिये
 भोगी विही बन जाते हो
 ऐसे दो-रंगे पुरुषों की
 बातों पर कोई ध्यान धरे
 वह पागल है, घर का ताऊ-
 ऐसी गिरगिट-सतान', हरे ?

जल-पान अभी मँगवाता हूँ
 कुछ-कुछ तो भूख लगा होगा
 इतना जब क्रोध किया है तो
 ज्वाला अत्यन्त जगा होगी
 फिर नाच तुम्हारा देखूँगा
 तुम तो विनाश की ज्वाला हो ?
 तुम ही तो पत्थर के आगे
 सटनाया करती माला हो ?

दो दो पुरुषों की नारी तो
 चपटी नक-कटी होती है
 मैं घर गिरधर भी दो असियाँ
 क्या एक ग्याम मं सोती हूँ ?
 संघर्ष बिना जीवन दूभर
 अपना संघर्ष हा देखो
 मीरम उमनता दूर हुई
 फिर नय आकर्षण ही देखो !

बोला संघर्ष आपका तो
 तन तक हा सीमा रखता है
 सारा जग ही हत्यारा है
 मन यह ही सदा निरगुना है
 संघर्ष नहीं तन तक सीमित
 तन का मन का संघर्ष मधुर
 मन का विधक तन का विकास
 मिल गायें पुन बजें नूपुर
 संघर्ष सोम का उद्गाता
 जीवन में ज्योति जगाता है
 अन्याय काजिमा दुराचार
 जीवन के दूर भगाता है
 संघर्ष तिमिर-तोमों स हा
 जिमस जग हाय भास्थान्
 विष पाप असत्य अधर्म ग्लानि
 विममें हावें लय नारामान्
 प्रिय बोले तो यह दूर दूर
 प्राकार निराई जता है
 यह बड़ा लड़ाई है दुर्गम
 यह सचसे बड़ा विजिता है

उसके नीचे अगणित योद्धा
 अभिजाप दवाये साते ह
 आक्रामक बल निहार कर ही
 पीछे मुड़ते हे रोते हे
 कहत हे उसक द्वारा को
 हाथी भी चरा न ताड़ सकें
 तोपों क बड़े बड़े गोले
 उसको कुछ भी न मराइ सकें
 मैं उस पर कभी कभी घंटा
 अनुपम सुख अनुभव करता हूँ
 वह महा प्रतिष्ठा का आलय
 अभिमान लिय पग धरता हूँ
 मैं सोचा करता हूँ येना
 कब सुन्दर अवसर आयगा ?
 जब यह सिर्हा का शावक भा
 जीवन—सबस्य लगायेगा ?
 यह मातृभूमि मरी मुझका
 जग भर स प्यारी लगता ह
 इमक सम्मरण मात्र स हा
 नावन में छाया जगती ह
 मारों प्रिय-वदन निहार रहा
 वसम्पल पूसा जाता था
 जा बार बार ही अननी क
 सम्मरण ज्वलन्त जगाता था
 धाली लड़न जादेंग तब
 मैं भी माना पहनाऊँगा
 मन्धार हाथ में दूँगा
 मन्तर पर तिलक लगाऊँगी

मीरा

जब युद्ध जीत आयेंगे तो
 धरती उतारें गाऊँगी
 अथवा अंक में सिर रख कर
 मैं भी कर्तव्य निभाऊँगी
 मा, जननी ! तू कितना उचल ?
 तारा मुपर कितना शीतल ह ?
 तारी महिमाया के समस्त
 जग भर का कचन पीतल ह
 पर, स्वभावत लड़ना भिड़ना
 मुझका कुछ भा न सुहावा ह
 मय रहें प्रेम स हिल मिल कर
 मुझको तो यही ही भाता ह
 यह जीव रक्त स लथपथ ह
 इसमें तो हाहाकार भरा
 जय श्री के अचल के नीचे
 शाश्वत-यकिल मुनसान धरा
 दुर्बलता मयस बढ़ा पाप
 दुबल होना अन्याय यहाँ
 दुर्बल मनुष्य के जाने का
 कोई भी नहीं उपाय यहाँ
 जो शक्तिमान् थे दुबल का
 मवस्व घुराया करत हैं
 दुर्बल की मारी को सय ही
 भाभी यत्नाया करते हैं
 धर्मों कर्मों के अन्त में
 मानव का स्वार्थ समाया ह
 ऊपर नाचे परित भूपर
 नम जल दिगंत तक छाया ह

ये धर्म-युद्ध नारी धमध
 वसुधा के कारण होत हैं
 हंसन वाले हंसत रहत
 राने बाल ही राते हैं
 था चले नगल पर यत्र मरा
 तो मैं न किमा को लडने हूँ
 नावन-पथ पर मध वदें चूँ
 आपस में नही मगाइने हूँ
 वह लख रहा था करन को
 जो दूर दूध सा घड़ता था
 जग-नृपा बुझाओ सबल करो
 बदन जाओ जो कहता था
 उमक तन में उमक मन में
 निमलता मनु मूलकता था
 तापित पापायो पर भा तो
 धामा धनिराम दुलकता थी
 कालों का राना ग्याइ मा
 जग-दुख से मन भर छाया था
 प्रिय के समाप मट कर धरा
 निरुदर का नावन भाया था



अष्टम सर्ग

★

जिस रज पर छोटा हो शरीर

उस घटना की जघु स्तनियों भा मन को करती रहती अघार
उसके दरान क लिए मनुग के आकुञ्ज रहते मतत प्राण
आराणें मृत बना दता उरका धिर परिधिग धूल घ्राण
मलपानिल के कके उमक आगे जाते है सभा द्वार
अनभा सा शीतल वश शान्ति सवोप राग का महा द्वार
यह स्वर्ज्यता का पुण्य-नीर

उस भू का मुफोच्छयाम इयोम

विस्मृत दोपित नारव अनत अथल में गतिमय अरुण सोम
विन्धायलियों क मधुर क मरते रहते अभिगम तान
सादामिनियों का नव नर्तन जिसमें जलदों का मुग्ध गान
सुर-धनु का गलित फलाओं का जिसमें अन्ति माकार रूप
गगता की मजुलताओं का मूत्मानिमूत्मतम तरल स्तूप
पुनक्ति कर गता राम राम

तरु, कोटर, सर पर, द्वार, डाल
 जिनका प्रति घड़कन में लिपटा अहि कु डलियों सा स्नेह-जाळ
 ऊँच, नीच, टढ़ मढ़, साधे, दुर्गम पथ, जो विचित्र
 भ्रामण दत्त मौन, स्थिय आकर्षण जैय जन्म मित्र
 सपनों में करते खल सदा जो भौति-भौति के लिये पेश
 चिर निद्रा व पाछ मा जिनका रहता अक्षिण स्मरण शेष
 जावन में भरत सदा ताछ

यों साध रही आसीन मौन
 उर के तारों को छूता था जाने अचिरल भजात कीन ?
 इवसुराण्य स पीहर लौटा वह भीरों स्मृतियों लिप साथ
 तन मन की अभिनव रचना में जिनका पूरा ही रहा हाथ
 हग झाँक रह थे दूर, मुक्त थे वातायन के श्यु कपाट
 बघपन का परिचित रज प्रांगण, पवत प्रदश, संज्ञात-वाट
 ज्यों कहत थे साजन्द हो न ?

परित उठता था यहा गान
 पर वह लोर्ड राई सा थी, सुनत थे नीरस बन कान
 हग दस रह थे इश्य किन्तु अन्तरू में प्रिय का विदा-यात
 प्रत्यापत्तन हा आशु तुम्हार बिना हृदय है शुष्क पात
 धाकूलता नारवता, विपाद प्रिय के आत थे घन याद
 पाहर धान की उत्सुकता में घुला गहन जिसस विपाद
 कल हा आर्द्र पर रही म्लान

कितन हा दिन थे गय यात
 जिनमें जग भर क दुःख-सुख का कितना ही बदला दिशा, रात
 भीषण का प्रम इवसुराण्य क चिन्तन-पथ पर चलत भवाध
 प्रिय चिन्तन में हा मला था, घुल मिलन का हा रहा राध
 नग हाग ता यह प्रम टू 1, मिलन हौड़ा फिर भूत काल
 परिवतन हा परिवतन जिसस घूम रहा था शून्य भाछ
 फिर जाग पड़ा था मधु अतात

पीपल का वह प्राचीन वृक्ष

दापहरी का जा गयनकक्ष, सब तुच्छ रह जिसके ममक्ष
 वे हरे मर वे शुष्क पण, जिनका सचय था निरय कम
 नौका बनती ऊपर चढ़न का जान सकगा कौन मरै ?
 फुनगी फैला कहता था ज्यों भाभा, मरे सुकुमार फूल !
 जीवन परिवर्तित हुआ अधिक, क्या मुझका मी तुम गई भूल ?
 था खड़ा विहग ज्यों विन्न-यक्ष

सूखे बिलखे थे समी पात

ये काँप रहे थर थर थर पीता था नवयुग का प्रमात
 वे मृदु पल्लव जिनसे प्रतिक्षण था भौर मिर्चानी क्रिय खल
 जान कब कौन कहीं बिलान हागय ल गया कौन पल !
 उनका सूखा, सूना गार कहता था व भाँ लिय खेद
 भू में खाय मिट्टी धन कर अस्तित्व न कुछ भी रहा भेद
 कुछ भाँ न यहाँ अब रहा बात

उस पीपल के घासा विहग

सुन-सूने से उड़ते थे सब चला गया था राम रग
 अब नहीं पाम उड़ आत थ पर तब करत थ उछल कूद
 गायन गाते हैंमने जाने फुनगा पर माते नयन मूँद
 जब करत बात पकड़न का ताँ आत फर फर दूर भाग
 दानों पर फिर भा डरत थे चिड़ियाँ बपोठ शुक् मुद्द काग
 तब कितनी था सुन्दर उमग ?

सुनसान पड़ा था मिश्र रूप

पंसा छनता था जैसे इसका बल गया है समी रूप
 मुक-मुक कर, झँक-झँक अविरल जिससे करत थ मुफ बात
 फँदा करत कंकड़ फिर भाँ रहता था मीठा स्नेहस्तात
 जिसके जल-कुँडों का पाना हर नेता था सब लह ताप
 तिरना भागना चरकर ढीड़ा जिनके मुख का कुछ नहीं माप
 सहता पकाका शरद् रूप

पनघट शृगों पर मौन मोर
 बैठा-बैठा टक टका रहा था मोंगि से थे नयन कार
 अरुमादम होते ही सुगन आ जाता था अत्यन्त पाम
 मोरनियों भा आ जाता थीं, जम जात थ फिर नृत्य रास
 मुद्र पौखों क सुगन में कितना होता उन्माह शात
 पौखों का गिन गिन कर रतना पाछे-पाछे फिरना सुखात
 व दिन थे सचमुच और भार

साते थे जिस पर पग पमार
 यह शय्या कान में दुबका जैसे कोई गहरा विचार
 मिर हाथ धैर नील कर कर जत थ जब जब आँख माघ
 नहें मृदु, फान्त विछौन थ अमृत से द्रव हृदय मीथ
 थपकी व व वदछा दत्ता ऊपा का प्रिय शातल समार
 दिनकर उगता निन घड़ जाता, फिर भा वह कच होता अघार ?
 अनुपम था उमका यह दुलार

भूल भूले हा गय पात्र
 जिनमें करते हृष्टानुमार थे खान-पान सब अहारात्र
 माजन करने की लघु वाली चुपचाप पड़ा नारस उदास
 चायनमय, सजल कहीं निमल पाना पान का भा गिलास ?
 चक फा लघु कुडा कहता थी आभा, जैसे हा करा स्नान
 किउन हा हाथों स पूरे दूटे आते स्मृति में अज्ञान
 पावन सहचर जो एकमात्र

झाड़ी-आगम वह मुदय राग
 चुपक चुपक, अचसर निहार जात थ जिसमें भाग-भाग
 गिलहरियों की उपाँ खड़ जात सुगम पड़ों पर भा समान
 काइ रहता ऊपर नाथ मृदु मधुर फलों का क्विप ध्यान
 मूकों क गुप्थ जहाँ कहीं दख ता कत खरित तोड़
 अदु दरा दूध पर लड़न का भापम में करत सतत हाइ
 मरगा अर जायन में शिगा

पावस क सुन्दर, रुधिर मध
 रीते राते स लगते हैं वीठा ग्यों उर का मधुर वेग
 भाओ, भाओ बरनो बरसो आवाहन करत निनिमेष
 हर्षित, नर्तित होत, हरती प्रिय इन्द्रवधूटी समी कदश
 रिमझिम रिमझिम घुँदें पड़तीं, करते थे नगे वन स्नान
 मिट्टी क घर बुनते सुन्दर, प्रासादों का था तुच्छ मान
 झूलों पर बढ़ते ताव पग

जादू में मिलते मित्र चाग
 सम्मिलित स्वरों में आतप का आमंत्रण करत लिय राग
 मन हरते थे बकरो भदों, गायें भैमें खर भश्य इवान
 परिचित से मित्र बन रहत प्यघहार प्राकृतिक धा ममान
 व्याही कुत्ती क लिय माँग छान घर से गुड़ घून तेल
 छकड़ी धुनते हलुवा घुन्ता कुनिया रानी सब बाल्य-खेल
 तब कितना था अनुराग, त्याग ?

सब अपन-अपन लग काम
 थे पशु-पक्षी वे मित्र-वृन्द जा भाष रह नित सुबड शाम
 कोई भूला, कोई पृला, कोई परिस्थिति में पराधीन
 इस पार रहा उस पार गया कोई निधन कोई अग्नि
 जो छान एक उद्गम स्थल पर बहता था लघु-लघु मधुर शान्त
 वह विविध विभागों में लोया, खचल लहरें अविराम भ्रान्त
 बन्ध सुल-सुल हिम, शांत धाम

वह सब, सपना रह गया शप
 वह भलहड़ता वह खंचलता भरता नीयन में कर्ण बलश
 लघु-लघु स उम पथ क यात्रा सब विशुद्ध गद्य तिल रहा धूप
 पन्हा यह गति तन-मन बदला बन्ध जावन क समा रूप
 विशुद्ध लहरों का तरह मौन हा जाता अनजान मिलाप
 पर मिलन में क्या सुख हाता ? ज्यान्त मिलता ह आग ताप
 मिलना भी देता भाग टप

किस शून्य गुहा का घोर द्वार

सरणादय में हा छान हुईं वह मरा जनना भा उदार ?
 भय किसकी गोदा में साँकेँ किमस भव पाँकेँ वह दुलार ?
 कसों की सहला, वदन घूम जावन का हर द कौन नार ?
 किमक भयस्र का मनु छार मुसका कर दगा भय सगल ?
 किमक मृगु वागा स धमृत क्षर-क्षरर शरगा दिव नल ?
 रराया जावन न मातृ प्यार

दुदा मदा यह भुन, घात

मानव वाग्नि, या नदा एक साधा गति स जाता समान्त
 जगता क विधिघ कलापों क लगत इस पर आयात घात
 अधिकांग ध्याफियों का जिनस रक जाता जावन का प्रपात
 विचलित होकर व इधर उधर हा जात जावन स निराग
 जगता क मुख भातदों का फिर लुट नहीं सकत इतान
 सिद्धता न पूणता वह सुखान्त

इच्छाओं का जसा वितान

जिमक उर में जितना हाता हाता बीसा जावन विधान
 इच्छाओं स अयत्र पृथक् जीवन का सत्ता नहीं प्यास
 इच्छाओं में ज जन्म मनुज इच्छा में हा हाता समाप्त
 इच्छा हा ह मनुष्य निमक मन का जसा स्पन्दन-ध्रमाव
 बीसा हा जावन बनता ह बीम हा बनत हाव माव
 उर का मवदन हा प्रधान

जावन क परित दुर्निवार

अविरान अगाधर रूप लिय पत्र रहत हैं सस्कार
 त्रिमका प्रभाय कल्पना-जाल मन पर पड़ता समयानुकूल
 अतितय मस्कारों का यह अणु-अणु में रहता लिय मूल
 टन भावों का नगुलन-यन करता रहता ह अतराल
 मारों का क्रिया ताड़ दता धन्धन का गावधराध जाह
 एतदृष्य मनुज गवित्त अपार

मीरी

जीवन के क्षण प्रयत्न प्राप्त

पूणता प्राप्त करने में ही होते रहते प्रतिक्षण समाप्त
मानव-जीवन दुबलता के भंगारों का अस्पष्ट धूम
प्रत्येक अग्नि के कण विनाश की शक्त मस्म को रह धूम
वे सुलग-सुलग कर कब किना विस्फोट करेंगे नहीं ज्ञात
क्षाराएत रहें याकि सुगों यह भा सब ह अज्ञान धान
जावन रहभ्य ह तिमिर-व्याप्त

जीवन के क्षण सञ्जातिकाल

संक्रान्ति-काल का प्रति स्पन्दन रसता अपना सत्ता विनाश
जगती में जा माना बिचित्र घटना है घटनाए अनस
जिज्ञासा पर भा नहीं कमा मिलता उनका उद्देश्य-अत
क्षण कभी सतत चिन्ता करत हैंम दत फिर घट प्रश्न मल
हस हा उलसन में द्विविधा में जावन का आता निरु कूल
उलभा हा रहता जगत्-जाल

सुख दुख हा नहर राग द्वेष

दोनों जीवन के मुख्य तत्व अतिम क्षण तक य रहें शेष
किरणों का मडल बन सूय श्रिमियाँ सूय स नहीं मिला
दिनकर किरणों स नहीं पृथक एक ही घस्तु तनों अमिष्ट
आत्मा विबुद्धि विस्तार अधिकता क सुख है अमिराम भाव
उसका मकोच, अल्यता दुख हानों का छलनामय दुराव
दानों न्त नित ह्य डेम

मानव सुख-दुख का घना स्पश

जिना जावन में ह विपाद उतना ही न आनन्द, हर्ष
बैभव, विनाम क मधुर भाव जावन में हात ना न तृप्त
मानव का ये घर रहत घट भा रहता अविराम छिप्त
धूम पार न्न न्न मियाय कुल भा हाता ह नहा प्राप्त
फिर भी मराधिक्रा का ज्यों घट उम पथ पर हा तस्मान व्याप्त

सन्निधित भयकरार्थक्य

जीवन बट सा विस्तृत अनंत
 सुख की दुख की दो शाखाएँ जिनसे आच्छादित दिग् दिगत
 य सघन पर्ण, अभिलाषाएँ जो हरा भरा कोमल ललाम
 विहगों के दल है स्वप्न जाल उड़न नम में जो तज विराम
 नाच छाया में अचकार ऊपर ह प्राचा का प्रकाश
 शारदासूरा मानस का उमग, कर उठगी है जो अट्टहाम
 जो मूछ, धोर, उनका न अन

जाघन में सबसे बड़ा मूछ
 छोकर हगता, करता सघत, फिर भी रहती ह दृष्टि स्थूल
 ममता, माया सम्माद, स्वार्थ क आवरणों में डका, खान
 कुछ जान नहीं पाता मानव, यह सत्य विरतन समाचान
 अपना भूलों क साथ पुद्द करना हा जीवन, सत्य तप्य
 पर यह अपन क्रम पर चलता करता भूलों से नहीं पथ्य
 धरु जाता है यह मूछ - मूछ

प्रतिभ्वनित नहीं हाता अतात
 जिस जीवन में उम जीवन का होता अविराम भविष्य भात
 उसक भविष्य का आकृतिर्भौ हातीं सम-भतर में निमग्न
 सुन्दर पथ का सर्गिम रखा नाहार निरोहित, अस्त भग्न
 प्रतिफल संजावित रगना ह इस धामान को यह अतीत
 दाना का यह सम्बन्ध हृद उम्य दिन समव जय प्रलयगीत
 यह परपरा मानव-अधात

अपन का मानव पूर्ण जान
 अपरों को पामर हान समझ कर उगता ह दपाभिमान
 अविराम हैसापा करना ह उसका दुमति का अधकार
 यह साध-साध मुस्काना ह भरा सामा का नहीं पार
 अपन का हान समझता ह तप रा उगता ह वह भजान
 सामभ्य हानता भार शक्ति हृन्दों में जाघन का विधान
 दानों की माशार्थ समान

मीरा

शाश्वत है निर्मल सत्य तत्व

घट परिवर्तन से दूर एकरस अजर, नित्य उसका समतल
अख्यादय होता नहीं ज्ञान जीवन भर भा प्राचीन, जीण
चन्द्रिका निरंतर ही समान, लगना न कभी श्रियमाण, शाणै
इसलिये क्योंकि यह नहीं सृष्टि मानव का, मानव है अपूर्ण
सर्वांग-आकांक्षा रखता यों उसमें निर्मित सब नहीं पूर्ण
प्रतिक्षण परिवर्तित मनुज-स्वत्व

स्वर्णम आदर्शों का वितान

विममें लिपटी है मनुज-जाति है महा आवरण का पिधान
दुगुणों और दुबलताओं का मानव गहरा लिये मार
अपन को समस्त धैर्यता है देवता स्वयं कैशा उदार
जगती को रेंगी हुई आकृति दिखलाता यह कृत्रिम स्वरूप
उर-धम में छिपा हुआ रहता उसका सच्चा वास्तविक रूप
यह मत्स्य सदा जावित महान्

मिट्टी का मगुर असत् पात्र

उसमें भी रखा हुई सुषा का मूल्य न कम शम् एकमात्र
प्रत्येक मनुज के अन्तर में अकुर सगन्धि के विद्यमान
उनका विकसित कर प्रकाश में लाना सुन्दर वास्तविक ज्ञान
ज्यों ज्यों होता जाता विकास जायन का स्तर भा वर्धमान
य शक्ति-प्रविष्टियाँ खुलने पर मानव हो जाता है महान
अमृत का घट यह लिये पात्र

आवश्यक है यह परम धम

मानव के लिये अपभित्त है, हममें सुन्दर कुछ नहीं कम
अपन जायन में वह समान जायन का चिन्तन करे गहन
उनका साधारण गूढ़ मनासृष्टियाँ हृदय में कर यहन
उन जनों को सम्मूल रूप कर जनों का द्रव दृष्टि टाल
जनों में ही धूल मिल जाय है यहा मरणात्ता मुक्ति-माल
द जाय जग का सूक्ष्म धम

भाषों की सत्ता में विछीन
 श्यन्दितों की विशेषताएँ हो जातीं उर्वो जल-बीज मान
 सब उच्च-क्षुद्र निज सुर-शुभ स हैंसत राते समयानुसार
 उद्यता नाचता, य सब हा कवल भाषों के हा विचार
 ऊँच भावों से प्रेरित हो जो करत रहते कम परम
 व अभ्यवसाया महामनुज कर दते सीमा पार परम
 जीवन भी क्या भावना दान ?

जावन का पथ निमाण-काय
 क्षण प्रतिक्षण सचन हो सुन्दर जगता की पीड़ा कष्ट हाय
 अपनी जीवित बेला में हा अपना सुर धन बैभव विसार
 जग का कुछ दना, फिर अनन्त शून्य में शान्ति से पग पसार
 सा जाना ही सच्चा जावन जिसमें न प्रदर्शन मृषो-माद
 मृत किये सत्य की गरी को ल जान में होता विपाद
 बनता जावन बोझिल, न तार्यै

पृथ्वा पर दानों नरक, स्वर्ग
 बंधन न रह तो क्या रखेगा मूल्य यहाँ अपवग वग ?
 दूसरा एक का पूरक है, दोनों से दोनों का महत्व
 रजना क गहरे अंधकार दिनकर की आभा में समत्व
 इन नरक स्वर्ग की छाया में जावन का तनता है वितान
 त्रियमें सुर दुःख आगहाद व्यथा का मुग्धरि हाता नित्य गान
 दानों पावन क मुग्ध सर्ग

नम में कितन हा प्रह अपार
 प्रतिपल जन्त हैं नित्य पहुँच पाता काइ हा ज्योति द्वार
 पमा काई भा नहीं भाग त्रियमें तारों का हा न जाल
 पन्त रत्न चलत रहत भाइता किये का नहीं काल
 पर कितन हा भ्रूय ज्याति लिय अन्तिम क्षण तक मरत प्रकाश
 टूटन-टूटने भा तम हर दत उग्राल होता विनाश
 मयका हाता उनका विचार

मानव करुणा से द्रवित प्राप्त

होता है जितना धार जन्म का बहता उतना धार स्रोत
सम्बन्धनशील हुआ करता हूना जय जगता का समस्त
संगात मधुर प्रतिध्वनि धन कर गुञ्जित हाता प्रतिपल प्रगल्भ
उस क्षण जीवन उन्मुख बहा जा सकृता है वह निर्विषाद
मुक्तावस्था के विना हृष-दुःख, हार्-लाम भाषा-विषाद

करुणा पावन-आधार-पोत

जीवन वास्तविक न मृत्यु मात

यह सतत मृत्यु का छाया से झाड़ा करता कल्पनागत
उसका रहता है लम्बे मृत्यु का करना है प्रतिपल परास्म
अपनी वास्तविक मृत्यु से हा जातता मृत्यु को यह कृतास्म
को-हू के अनटवान् को ज्यों बँधना पावन का नहीं काम
सुन्दर जीवन के इगित पर नाचता मृत्यु निर वास्तकाम
निमल जाघा का मृत्यु मात

जगता में मृत्यु महा रहस्य

मानव-जीवन में एक मृत्यु है अल सत्य शाश्वत अवश्य
जीवन में वाह अशिव वस्तु याद है तो यह है मृत्यु नाम
उससे मा आधिक नयंकर है उमका भय पगाधिक अमाम
वस्तुत मृत्यु-कल्पना दुःख यह महा भयानक, महा धार
जावन विकास के क्रम का है अधमान मृत्यु, इन्द्र प्राण-धार
उमका मूला में जगत् सत्य

प्रत्येक मनुष्य का यही वाह

यह शुभ से जावित रहे सदा जीवन में धा पाय से वाह
यद्यपि जावन का अंत अवश्यभावा परिवर्तन विहान
पर मान मृत्यु का गुणत है भय विद्वत् हाता रूप-काम
बिन्न मूर्ति अधिक से अधिक प्राप्त हा जावन रहता यही ध्यय
ईप्सित कामना किया करता है प्रकृत अनजान, अगप
यदृता रहता है मृत्यु राह

अष्टम सर्ग

कुछ भी न अमत्-उत्पन्न, जात
 ह असत् मनोभव जब मन कुछ देखता न सुनता ध्यय-बात
 जब मन स लक्ष्य दूर होता, इतना बाहर उसका निवास
 अस्पष्ट अगोचर सत्ता का किंचित् भी होता नहीं माम
 "कुछ नहीं यहाँ, इ शून्य यहाँ यों कर उठता तब धोकार
 पर शून्य अतत अपन्न-जात

तम में हमका मष्ठा स्वरूप
 किंचित् भी मृत्यु विषय में हम जा जानें यह ह बाह्य रूप
 जो यह कहत ह हम-ता इसका रहस्य सय लिया जान
 घस्तुत बाह्य क अंतर का हा होता उनको झलक जान
 उनके अत्यागम नयनों में जाता ह कवल चौध बाह्य
 आवरण, मृत्यु क स्तर अज्ञान, जावन स परे न गम्य प्राह्य
 शान्त सहस्रता अध कृप

विस्तृत अचर्यों क सुग श्रृंग
 हमम निस्तृत मरिता जम लहरों में भर भर कर उमंग
 भू भागों उपलब्धियों, घन प्रागण का करता हुई पार
 विद्याम न क्षता उम क्षण तक जब तक न अन्धि में लान धार
 वैसे हा जावन मा मिलता ह मृत्युकणों म एक रूप
 जावन का अतिम लक्ष्य मृत्यु भास्मिन्त सम्मिधित स्वरूप
 ज्यों कलि-सफुट में बद्ध मृग

पूया मा आता कमा काल
 जिसक क्षण साधारण क्षण म अत्यन्त मिश्र हात करान
 उम क्षण खात भातरु अभाज सत्ताप स्वय अस्तिर-ज्ञान
 जावन में इ-ता अधकार पुष्टियों, सघषण विद्यमान
 जिनका कल्पना मात्र स दुरत प्राणों ऊपर अज्ञान मार
 भाहत हो यत्र तत्र रक्षण क शिव किया करत पुकार
 वह काल मृत्यु का कृष्ण जाल

पूणता मृत्यु जायन न पूण

सधय स्थूल जव जायन को टक जता ह कर सूक्ष्म पूर्ण
 अपना नामयिक सकुचितता का भुला चिरतन भाग्य भाव
 उसक विस्तार किया करते नयस्ति, चतुर्दिक छ प्रभाव
 उथा पतन का ससृति क यह ही रहस्य मानव शरार
 भातिक अतर आध्यात्मिक ह दानों मिलकर ही पार तार
 जावन क स्वप्न अत अपूर्ण

सत्ता-सीमित बुटि-हीन ज्ञान

जिसका आश्रय लकर निगूढ़ वूरस्थ उलझनों का वितान
 सुलझाना मनुज चाहता, होता अतः विफल अस्पष्ट ध्वान्त
 देती माया कुछ नहीं काम उस स्थल पर मोरव नयन शान्त
 घाणा न कुछ कह दत हैं, जीवन रहता अस्पष्टधूम
 यह मृत्यु रहस्य जानन को हृष्टाएँ व्याकुल धूम धूम
 ज्ञाया पथ पर अग्रसर अज्ञान

जावन क पथ पर प्रगतिशाल

मानव पर प्रतिपर परिवतन पाता जाता कल्पनाशील
 यस्तुत जगत्, यह प्रकृतिस्वय क्या बदल रहा ? पर यह न बात
 निर्मित जिन स्वय उपादानों न हम व क्रमश हृष्ट पाव
 वे निज गुण धर्मों का तजत हाता यों परिवतनप्रतात
 यचपन यावन-दृष्टा वृद्धावस्था में जाता स्वत वीत
 यों स्वत पहुँचता मृत्यु-काल

सवय मृत्यु ही विद्यमान

हिम भाषरणों में टक अद्रि नम में निहारत गान्त ध्यान
 सागर क विसृत अतर में अगजिन उम्नी रहता तरंग
 य ज्योति पिंड ना सूर्य चंद्र तिनक उर में उल्लास-रग
 बीजापर वितराता रहता आणिक-उपा में मधुर हास्य
 शादल-अंजल अशुभन में अँगड़ाई मता घरा हास्य
 इनक भा हरती मृत्यु प्राण

है मृत्यु शान्ति का अनल धक
 मलयानिल सा शांतल, सूखकर ज्यों शरद-काल में सम मयंक
 परित अशान्ति, जगका कण-कण आप्लावित इसस दिवस रात
 प्रति प्राणों में, प्रति कपन में प्रतिपल अशान्ति का चिर प्रपात
 थाहर अशान्ति स आन के करता मानव नाना प्रयत्न
 जावन अशान्ति है मृत्यु शान्ति, जावन में एक अशांति रत्न
 कमलों को धारण किय पंक

तुम किस चिन्ता में हुई लीन ?
 उसने देखा सामने खड़ी उसकी छविता दासा क्षीन
 वह कहती जाती थी दस्तो, कितना ऊपर चढ़ गया घाम ?
 कब लगा गइ थी पहले मैं घर भर का मैंने किया काम
 तुम क्यों उदास सी बैठी हो ? क्या तुम अस्वस्थ हुई कहो न ?
 मैं दख रही हूँ खड़ा खड़ी तुम चिर बेला स रहा मौन
 मैं समझ गई तुम मातृ हीन

पर, इस चिन्ता में कुछ न प्राप्त
 आवश्यक कार्यों स निबटा, दुख, चिन्ता को कर दो समाप्त !
 उसने कर फेरा मस्तक पर फिर चला गई धड़ कर हुलार
 पर उलझन में उलझना मारों के अतर पर पड़ गया भार
 सोचने लगा धड़ यो इसका जीवन कैसा दुःसमय अनन्त
 पति-मुत्त-सुरत स यचित बचपन की विधवा दुग्धिया हत हत !
 जावन-कण कण में कष्ट प्यास

आधार रहा यस तिरस्कार
 मा-याप अल्प घळा में हा मर गय रह गइ निराधार
 अपमान, हांमटना में पल कर पल-पल क्षण रण दिन गय बात
 यारन आया, पर दुखों पर कामा कुत्तों न रिया कात
 जारज मतान हुई धड़ मा जा सका नहीं पति स्वत-या
 वासना-भच पर हार गई धड़ कर कर सब काड़ा विहार
 नजर नाका मस्तपार पार

मारो

मरी मा मर कर स्वरा धाम
 लय बला गई ता इसन ही मा की उयो मरा किया काम
 मैं हुई बड़ा बचपन न रहा, पर इसका पावन वही प्यार
 इमक सम्मुख अब भी मन्हीं नही बिटिया पाता खुलार
 जावन का बड़ी बड़ा शक्ता इसक अतर में आज लीन
 औधन कंटकमय, पर फिर मा सुन्दर उपदेश वही अदीन
 अतर् में प्लावित श्याम श्याम'

स्मृतियों में अब मा एक बात
 करणा पुरित बातना मरी जो कही इसी न एक रात
 बिटिया मरा नहा नहा बच्चा चर स था अति विमार
 कोई मा पास न आया जो हर छता कुछ ता ब्यथा मार
 जब तक यौवन तब तक उसकी रहती था प्रतिपल मर्ची लूट
 जावन में पारदार अथक पाता आई हूँ गरल घूँट
 निशु का मा रह पाया न गात

ऊपर स गोरा है स्वरूप
 पर, अतर् में अकित अराणित पशु-जन-बल का घासना-रूप
 व्यभिचार दुराचारों का तम इसके अतर् में विद्यमान
 करणा-अन्न, पीत्कार धार औधन मर छत रह प्राण
 इसक अंतमन, कण-कण में बाधा पीड़ा चिन्ता, विपाद
 फिर मा मरा प्राणा बन कर दता रहता आल्लाह-याद
 स्वर्गागा सी सातल बनूप

परिवतन अति गहरा त्रिलाक
 मारग भी था, वह उमन था, छाया था मन में अधिक शोक
 वह शौक रहा था दूर दूर घातायान स, थ अरस मय
 अल्लमाय स हा दाग रह थे हर मरे मा सजल चंद्र
 उसका मध साधित विषवा था, वह नहीं साध पाई उपाय
 कय जाधत तिन काटेगा, पावन मर कथल हाय हाय ?
 अमिलापा काइ सक राक ?

उसका कुदृ पसा हुआ शत

इस मग्य लोक में ता कवल दुर हा दुख ह आघात, घात
 य चाचा ताहें सय परिजन चल देंग णकाका अवान
 नात ना क ही शगद् है मिष्या ह सारा जगद-गान
 जयमल धयस्क हो गया साथ गलता वृद्धता नहीं आज
 सब की ही नई बसा दुनियों सब भयना-अपना लिय काज
 उर लगा गूँतन गान स्नात

दूर हुए तुम, दूर हुआ मैं, क्षण प्रतिक्षण का मिलन कहाँ भय ?
 व भी दिन थे साथ रह हम प्राणों में रुकार नई थी
 नहें मन के प्रिय सपनों में निमल मलय-व्यार वहा थी
 धृदा थी, विश्वास घना था तब दुनियाँ था और निराली
 झूठ-सौँच, सुख-दुख द्वन्दों स दूर रहा जावन का डाली
 एक प्राण थे एक प्राण था भेद भाव का नाम नहाँ था
 घन-छाया थी ग्राम-काल का दापहरी का घाम नहों था
 जावन बढ़ला, कंकपथ पर शरत चलते जलन यहाँ भय



नवम सर्ग

★

मन्दिर का घटा नाद बना भावाहन
सुपरित मृग या आकषण का याहन
पथ दाप-वतिकापै भालाकित करना
भारता इगों में स्फूर्ति खपल गति भरला

पाङ्कित जन का भारता ब्याम में छाड़
ऊपर वा आर लगी आँसू भर आड़
मन्यक या मत आमा गत ये नर नारी
उद्धतित अठरूमान्त कष्ट या भारी

जन-जन क प्रिय सुवराज रूप-यल शाखा
अग्र्यन्त रगण ये भाज घग थी काला
अमरों क पथ में उलस गई थी नाका
दुस्मह किंचित् प्रतियूल पथ-का शौका

मन्दिर घर घर में द्वार नर आराधन
ह प्रभु! सुवराज हमार पायें जीवन
नग पात थे वल्ल भारत निरमंग
कारा-बद्धिण स्वाधान उवहत उमंग

पूजा का स्वर, जन का करुणा कोलाहल
 क्षण भर में लीन हुआ अवर में चंचल
 सब अपने-अपने कम निरत नारा-नर
 उदयाचल पर कुल्लु चढ़ भाये ये दिनकर
 क्षण भर पीछे भा पहुँचे राज चिकित्सक
 सब कुल्लु निहार कर चल गये ज्यों शिक्षक
 निशिदिन भावश्यकतानुसार भा जाते
 सताप, धैर्य भाति परिजन को द ज्ञात
 ज्यों-ज्यों करत उपचार रोग बढ़ता था
 तन हाता था मृग, बह ऊपर बढ़ता था
 मारों का सारा अस्त-व्यस्त था दैमव
 सूनी-सूना सी थी ज्यों मिला परामव
 जल-हीन बल्लरी सी थी वह कुम्हसाइ
 टज-बल भविष्य ध्रियमाण, अँधेरी छाई
 दुष्कर उसका पीड़ा विपत्ति का वणन
 सताप-व्यथा में झुलस रहा था सजन
 यह छाया का ज्यों था सवा में खाई
 इतना तत्परता कर न सकेगा कोई
 कितना हा काली निशा हगों में फाटा
 अपनी मुख-साधन-वस्तु जनों में बाँटा
 पीता जल भी न जरा, हो जाती सध्या
 पति-सवा में तहान धन्य वह वधा
 निशिदिन शय्या क पास मौन रहती थी
 मारों का सरिता में मृग सा बहती था
 प्रिय कहत गुन क्यों व्यथ कष्ट छाता हो !
 पोभो लज, भोजन क्यों न प्रिय ! पाता हो !
 मैं जीऊँगा अब महों मृत्यु चढ़ भाई
 जावन-श्रीपक पर क्षुब्ध पायु मैंहराई

सुनती यह उसका हृदय टूट सा जाता
 मस्तक बाझिल, सब्यधित घूम रह जाता
 जीवन का सारा स्नह गिरा में मर कर
 आशा मर देता मस्तक पर कर धर कर
 मृदु कर का भमत स्पर्श शान्ति मर देता
 जीवन की ब्यथा निराशाएँ हर जाता
 प्रिय मुस्कात मीरी को स्वयं हँसान
 आशा लहराती, मिलता सुख अनजान
 सोचत कुँवर, यन्ि मृत्यु हो गई मरा
 तो हतभागा यह कहाँ रहगा घरा ?
 धन धान्य समा हागा विलास वैभव का
 पर, आगाओं में नाम न कुठ कलरव का
 में नहीं रहूँगा ता यह भी न रहगा
 में मुक्त रहूँगा पर यह फट सहगा
 ह नारा ! जीवन हत, हत यह तरा
 विधवा का जीवन ब्यथ, कमा न सघरा
 साधत-साधन करुणामय हो जात
 चिन्ता चश्रों में उलझ-उलझ सो जात
 सपना आता मारी प्रधाह में गार्ह
 आधार हान असहाय जान कर राह
 मकरोँ का लालुप मुँ राह मुख खाल
 दृष्टा में प्राप्त बनान भविरत डाल
 चौकत अधिक करणा प्रंदन सा करत
 मीरी शकारता ध्यान वास्तविक घरत
 मुँझलाहट होता उम्हें स्वयं अपन पर
 मैहराता बारबार ध्यान सपन पर
 करत विचार, सपन मिथ्या हात हैं
 दिन की चिन्ता आता जब हम सात हैं

होगा कोई यदि तबु तूम व मन
 पर राग मयकर, शस्त्र काम कव दत्त ?
 मारों का मुग्ध निहारत भोला भोला
 सत्ताप, गान्धि से मरा ज्वलत निराला
 जाधन की मन में लिय हुए वे आत्मा
 चिन्ता की करत चूण सतत अमिलाया
 छूटवा गति का साथ किन्तु जाता था
 जलता था दापक स्नेह रिक्त पाता था
 चलता था गति-अशक्ति द्वन्द्व-मधपण
 परित्रया, मधु स्वर करत अमृत वपन
 साथ प्राप्त मारों गिरधर क सम्मुख
 कम्पा स्वर में बिसरा देता अपना दुःख
 उमका स्वर-लहरा में तमयता हाती
 गायन कहना अन्याय, करण यन राता
 जान मरन का प्रश्न अधिक गहरा था
 रण आशा और निराशा में टहरा था
 प्राणों पर काल घना घिर-घिर भाव था
 मृतप्राय कला विश्वास न रा पाइ था
 कितन हा चन्द्रायण मन घना तपस्या
 करन का पद सकश्य ल सुका वश्या
 कुछ क्षण निकाल कर तह सोंचा करता थी
 पर्यर क आग रग मोचा करता था
 करता था उदर भरण पशु विहग गणों का
 दत्ता सविता को अर्घ्य सुनीर रणों का
 प्रायक श्वास में पति-जीवन का भागा
 संवदनगाल पवित्र हृदय का भाषा
 उल्ला में मा पति हनु कूद सकता था
 प्रति जावताथ नित्र प्राण भूद सकता था

मीरों

मृत्युञ्जय का जप-जाप पढ़न चलता था
 मा बापों का डर पीड़ा स जलता था
 ब्रह्म-शान्ति दान-दक्षिणा आदि स करते
 डर दूट चला था भ्रष्टु हगों से शरत
 घोणा के मञ्जुल स्वर पापल की ध्वनियों
 थे प्रसुर निराशामय, ठ-मन कामिनियों
 मदिरा क मादक प्याळ रिक्त पड़े थे
 नीरस हताश कंधन-मधु सिक्त पड़े थे
 तामता नहीं था नव-युवता-नयनों में
 सुन्दर कोलाहल शान्त हुआ भयनों में
 हय-गज चलत थे पर न रहा चंचलता
 डों का प्रतिफल मत्त हृदय न मचलता
 अशिराम चतुर्दिक् एक सिद्धता छाई
 रोगी के व्याकुल रद अत्यधिक भाई
 उपचार कठिन-स-कठिन निरथ करत थे
 सबका न्त सान्त्वना स्वयं डरत थे
 चिन्ता करत रागा न कमा निज दुःख का
 चिन्ता था मीरों क नव जावन रूप का
 छैन दिन काग्यी स समस्त पात थे
 दुस्मह ज्वाला स शांत न रह जात थे
 कितने हा गायन जो उर छू जाते थे
 रूणावस्था में मा कुमार गात थे
 कस्य हा गई थीं गालों का कड़ियों
 जा यथा समय विलराता मीरों छड़ियों
 जब स्वस्थ रह तब प्रतिनिधि हा मुनते थे
 जावन का कला प्रपूण नाद बुनत थे
 मीरों भावों में खा जाती बह जाती
 सम्मिलन दाय संस्तब्ध स्वर रह जात

नवम सर्ग

नौका तरता घटिका शुभ्र भचल में
 मुख पास किय दोनों निहारते जल में
 रचबल छहरों की माँति उमगें उड़तीं
 आलिंगन के मधु-पागों में आ जुड़तीं
 आकषित करती दूर क्षितिज की माया
 चलदल-घट-कुल की सघन पस्लवित छाया
 तट पर चल जल में मातर घरण हुआय
 -यौवन क मजुल मधुर भाव मँदराय
 भव मी कुमार गाने का प्रेरित करत
 अपना परिस्थिति का ध्यान नहीं कुछ भरत
 मारी गाथा आशा क हृषित गान
 पर ये कहते गत वण की कथा सुनान
 दुख में सवेदनगील हृदय हो जाता
 पाड़ित नर दुख के गायन स सुख पाता
 पाड़ित मन पर पड़ता प्रभाव पीड़ा का
 सम्मग्य नहीं कुछ रह जाता झीड़ा का
 बाता युग दुख की ग्रन्थि खोल देता है
 अतर् चिन्ताएँ अधिक मोल खता है
 दुख क प्रवाह में सब कुछ बह जाता है
 दुख में मानव मानव हा रह जाता है
 किनने हा जावन के रहस्य चिरपरिचित
 प्रिय कह दंत भव मारों में बह कल्पित
 कहते थे प्रिय, न जान कितना घातें
 मन का हैं जन स, न अनृत य घातें
 मारी कहता य घातें भव जान दें
 पीछे कह खना भवसर तो भाव दें
 विधाम करें चिन्ता की बात न हाव
 खोलें य अधिक दिन रात प्रात मर मारें

मीरा

जो बीत गया सो बीत गया, क्या चिंतन !
 तन पर प्रभाव फैलाता उद्वलित मन
 धाम लण चिन्तन का न भाज कुछ अथसर
 लय स्वस्थ रहगों, समी सुनूँगी जा भर
 घल्लरियों क सुरमु में दूधा दल पर
 मन्त्रा के मंजुल तारों में दल स्वर भर
 जो सभ्या क अचल में गीत सुनाया
 गाओ फिर अतर नहीं प्रिय ! भर पाया
 बाना वह मैं ता भूल गई क्या गाया ?
 मैं जो कुछ कहता वह न आपको माया ?
 मैं कहती हूँ अथ भाग आप न खोलें !
 आराम करें मुख नहीं जरा भा खोलें !

क्या कहें प्रिय ? मन नहीं मानता मरा
 यह कौन जानता कव उठ जाय डेरा ?
 आया हूँ ता जी भर गायन ता सुन लूँ
 कर रिफ म रह पायें मैं कुछ तो सुन लूँ !
 मुझका भव जायन का विश्वास नहीं है
 आय मा आर न आय साँस नहीं है
 केमा बातें करते हैं यह न बिचारें
 हावेंग मुम्नर स्वस्थ न साहस हारें
 मारों न उनक मन का बात बिचारी
 नर्त्री का लगा मनान वह सन्नारी
 अरुजा मुनिय मुस्काती था, माता था
 पनि मुख पायें बय हसीलिण गाता थी

मान कितना हो न जाम

मान थी अम्बरलियों में

ये मधुर मंकार करत

अमर अगणित बलियों में

उड़ रहा सौरम लिय
 शीतल पवन धामद सन् सन्
 मुग्ध चितवन झर बजाता
 या विपची झनन् झनन् झनन्

व्योम में भा-जा रह थे
 गीतिमय हो विहग सारे
 मद मुस्काते सुमन थे
 स्वप्न रत से मौन धार

धूलि धूमिल हैस रहा था
 व्योम में भा एक तारा
 पर न जाने थे कहीं तुम !
 शून्य मानस खोज हारा
 शून्य मयनों न निहारा

स्वर छहरी का सुन्दर प्रभाव पड़ता था
 अमृत का मंजुल तरव मुक्त झड़ता था
 बोले प्रिय तुमन मरा चित्र बनाया
 मरा होन पर भी मैं देख न पाया
 मीरी बोली, वह तो है अमा अधूरा
 व दूँगी वह जब हो जायगा पूरा
 अवकाश न, पूरा मैं न उस कर पाई
 रखाओं में मैं रग नहीं मर पाई
 हैस कर बोल प्रिय व्यंग्यमयी मधु वाणा
 यदि नारी हो तो ऐसा हा कल्याणी
 नाचे गाय भी रखाचित्र बनाय
 कविता-समता कोई न कमी कर पाय
 प्रिय हैस देते तो भाग्य जाग से आते
 अंतमन के उहास मपुर बन जाते

स्तूपित, क्षुभित को अमृत सा मिल जाता
 अभिराम ठमगों में उरसव छा जाता
 वह हँसती थी इसलिये कि प्रिय हँस पायें
 संस्मरण सुनाता क्या मूछ वे जायें
 गाती थी यों आशा से उर प्लवित हो
 तम क विस्तृत अचल में पंकज सित हो
 प्रिय बोल, मुख पर अपरक नयन गड़ाकर
 मावों से भाव, नयन से नयन लड़ा कर
 पर प्रिये, शठ होता है मुझको ऐसा
 वह चित्र रहगा यों बैसा का बैसा
 जिस कलाकार ने मेरा चित्र बनाया
 उसका कुछ पसी हा विचित्र सी माया
 वह मरा रखा चित्र मिटाने वाला
 रेखा पर फिरन वाला है कर काला
 उसका ह काम मिटाना और बनाना
 वह रखाचित्र बनाता है मनमाना
 बनने पर वह फिर हाथ फेर देता है
 बस इसी काम में वह निव रस खंता है
 जिसको बनने से पूर्व मिटा जाता ह
 इसका मतलब ह स्पष्ट न हम खता ह
 वह रखाचित्र नहीं सुन्दर हो, पाया
 उसकी सुन्दरता से न हृदय भर पाया
 वह पुन मिटा कर उसको सुन्दर करता
 रता में गहरा रंग निरन्तर भरता
 तब तक वह यों अद्विगल करता रहता है
 जब तक सुन्दरता से न हृदय भरता ह
 यों तित्य न जाने कितन चित्र बनाता
 कितनों पर ही वह हाथ करता आता

उसकी तूलिका निरन्तर चलती रहती
 नित नव्य कल्पना नव भावों में बहती
 उसको न हय है, और नहीं पीड़ा है
 उसका ता अपनी यह केवल क्रीड़ा है
 उसका कोई भी चित्र नहीं है प्यारा
 कोई भा चित्र नहीं है उसस न्यारा
 कोई भा ऐसा चित्र नहीं बन पाया
 जिसन उस कलाकार का जानी माया
 यह क्यों करता यों ? यह तो यह ही जाने
 वह जान बूझ कर करता, या अनजान
 चित्रों में जितना रग प्राण भरता है
 वम उतना ही वह आकर्षित करता है
 जिसके पीछे कुछ नहीं मूक्य रह जाता
 वह रेखाचित्र नहीं सुन्दर रह पाता

कितम हा रग विरंगे चित्र निराले
 कितने ही केवल हा जाते हैं काबे
 कितनों का भाव भगिमा माठा हावा
 आमा क भाग नीरस एगत भाती
 रेखा चित्रों से शून्य नहीं निमाता
 निर्माता का सबसे समान ही नाता
 बसते हैं वे सब निमाता क मन में
 निर्माता अकित चित्रों के कण-कण में
 उसक किंचित् इंगित में नाश समाया
 इंपत् इंगित में निर्माता की फाया
 वह कर्ता हर्ता, भर्ता माग्य-विधाता
 एता प्रलयकर शंकर यह ही श्राता
 उसकी अगुलियों में अमृत की माया
 जिसको मो एता अगुलियों की 'दाया

मीरा

वह प्राणवान् गतिगाल दिव्य ज्योतिमय
 वह दिव्य चित्र, उसको न विनशरता मय
 चाहा तुमन भा रखा चित्र बनाना
 हा कलाकार सुन्दर तुम भा, यह माना
 उस कलाकार का किन्तु सृष्टि म्यारी है
 उमका प्रसन्नता बिना कला हारी ह
 जगती में जितन कलाकार मतधाने
 उनमें उसक ही अंग ज्वलत निराल
 व भी प्रतिपल निमाण नाश करत हैं
 क्या बना विगाढ़ा नहीं ध्यान धरत ह
 उमकी इच्छा एसा कि मैं न रह पाऊँ
 सान्ध्य होम उसको कब तक मैं माऊँ ?
 मुझ म उमका कुछ हृदय नहीं भर पाया
 इसलिप तुम्हारा चित्र नहीं बन पाया
 भाश्रय चकित थी नहीं जान कुछ पाई
 उनका वार्ते दुस्त-पूष नहीं कुछ भाई
 फिर भा वार्ते में तप्य, सग्य लगता था
 काली छाया सी अँलों में जगता भी
 यह सोष रहा था यह दान का धारा
 वह निकली कंस सस्त स्वस्त कर कारा ?
 दान की धारा का प्रवाह था ताला
 पर उसने धीरज धारण करना सीला
 यह ज्वर-बलाप या अहम मृत्यु-संदान ?
 जावनी शक्ति का सान्त हुआ सघषण ?
 यह कष्टमयी वाणा इश्वर प्ररित ह ?
 वा माकों में छाया तम-तोम असित है ?
 वह, मय विद्वल होगई, कठ कुम्हलाय
 यह ममस रही थी नहीं कि क्या कह आय ?

छड़खड़ा पड़ा स्वर, वाला क्या कहते हैं !
 रस हीन कल्पना में निष्फल बहते हैं
 यह प्रचुर निराशा इतना ठीक नहीं है
 जीवन की इतनी पतली स्लीक नहीं है
 होगा न बाल भी बाँका, मैं कहता हूँ
 एस भावों में मैं न कभी बहती हूँ
 जीवन के पथ में रोग, दोष आते हैं
 अपना विषमय दुष्प्रभाव दिखलाते हैं
 पर थाड़े दिन में एसे क्षण भी आते
 जिनके प्रवाह में रोग, कष्ट बह जाते
 उनके जाने पर जीवन छहराटा है
 वृत्ती उमग से पथ पर बढ़ पाता है
 कटक-कुल पर चलना जावन की भाषा
 वह जीवन क्या जिसमें कहीं कुछ भाशा ?
 ऊँचे पवत पर चढ़ने में दुख लगता
 पर नाच आन में कितना सुख पगता ?
 घाटियाँ पथ का जावन सबल बनाती
 काला कादम्बिनियाँ अमृत बरसाती
 तम क विस्मृत भवल में दीप मचलता
 मोपण पथ पर विद्युत् का नतन चलता
 निजम भयावने उर में चट्टानों क
 शत शत निम्नर बहते हैं मधु-नानों क
 मुझका गहरा विश्वास सदा जीवन का
 कर सक न विचलित उस कष्ट कुछ मन का
 पीड़ा-कष्टों क क्षण सब झूट गय हैं
 क्यू रई प्रतीक्षा अब क्षण सुन्दर नय हैं
 वह भाँति भाँति के मुन्दर बचन सुनाती
 जावन में मंगल भाशा मधुर जगाता

कुत्सित भ्रम की कालिमा सतत धाती थी
 पति सुनते, वह भी ध्यानमग्न होती थी
 सम्माहित थे वे उसके मोजपन पर
 काली छाया थी उनक कुंठित मन पर
 उसकी विद्वत्ता स व आरुपित थे
 वाग्मिता मधुर मायण म भति हर्षित थ
 हँसते थे वे या भाशा का उपक्रम मी
 जग जाता भंत् र् में प्रकारा, पर तम भा
 वे क्षुब्ध लहरियों पर नौका स बहत
 लोय लोय स, शान्ति हीन स रहते
 वे कलाकार थे कला उन्हें भाई थी
 जावन-ना क अनुकूल हवा भाई था
 भास्वाद् छा गया प्राण मुक्त हँसत थे
 सगात नृत्य, कविता घर घर घमस थे
 भमिराम कला प्रतिपल विकास करती था
 जन जन का भाशा नव उद्धान भरती थी
 पर, इसा समय आ गया अघानक झोंका
 युवराज रण, जीवन का उल्ला नौका
 क्षण पर क्षण, दिन पर दिन चढ़ते आते थे
 नूतन दिन, क्षण प्राधान बन जात थे
 जग मूला या अपने दुख सुख में सामित
 पर मीराँ क उर में दुख हा दुख आंकत
 वह समझता इस तन का कष्ट घटगा
 यह पाङ्गा का दुख पूण वितान हटेगा
 वे हँसत कहते तुम न समझ पाभागी
 कुत्सित समाज बलवान् बूझी जाभागी
 कह मा दते थे कमा-कमा य बातें
 ये दिन न रहेंगे, नहीं रहेंगी रातें

मैं मा न रहूँगा, कैमे रह पाभागी ?
 उखड़ा लतिका की ज्यों कुम्हला जाभागा
 वह तुल पाठा सुन-सुन कर एसी बातें
 उसका ऐम य प्रश्न नहीं कुछ भाव
 कहता प्योी बातें हैं पागलपन की
 पर प्यथा भयंकर होता उसक मन की
 व धार-धार कहते घीणा तो छाओ !
 ऋकृत भतात हो एसा गायन गाओ !
 फिर स्वयं गँजता उनका स्वर घामा सा
 धूमरित, विकल, सुपचाप मृत्यु-सामा सा

आज यह अंतिम मिलन है

वेदना क गान तुमन

हा ध्यायित मुझका मुनाप

सित कपालों पर गरम स

अधु-कण दा लुङ्क भाय

हृदय की भविरल जलाता

धिरह का मापण जलन ह

आज यह अंतिम मिलन ह

आग प्लावित हृदय में था

हाम कितना हा न जाने

कल्पना क परत फैला

धे उड़ काटर बनान

घन निराशा क हृदय में

ला रहा विद्युद्गन गहन है

आज यह अंतिम मिलन है

मापठा मनुज कुछ और और होगा "

जीवन का क्रम जलचर का सा गीता है

मीराँ

आशायें स्वर्णिल जाल बुना करता हैं
 जगती क सुन्दर तरब बुना करता हैं
 प्रस्यक मनुष्य की चाह मिल चिर-जीवन
 बेसी आशाएँ तृप्त रह जैसा मन
 बंधन न रह, तन, जन, धन सब हृच्छित हों
 सबस्व चिरतन भगृत स निचित हो
 पर सूत्रधार कोई ही है मानव का
 है क्षुद्र जीव मानव तो विस्तृत मव का
 वह जस रखता सूत्र नाचता घिस
 जानें बात किमन हा युग-युग एस ?
 इस भू पर मानव खल खलने आता
 नश्वर जग में क्रीड़ा अपना कर जाता
 तब तक चलता है तापक सा जळता है
 फिर सहसा उसको अन्धकार मलता है
 जावन क पथ का कुछ विश्वास नहीं है
 जावन क रथ का सहसा नाग सहो है
 काली कराल छाया क जत्र क्षण आत
 कर दत निश्चय अंत, हाँट कव पात ?
 मव परिजन रह हताग पिता मा माई
 हो गय कुँवर निर्जीव मृत्यु जब आई
 दूटा साँसों का तार क्षण जा भटका
 मीराँ घिट्झाई, सिर धरता पर पटका



दशम सर्ग

★

खग-बाला कलरव वीणा
में विरह राग जय गाती
पकच-कलिका की भाँसें
खग बाला पर जय जातीं
उर-कसक लिय तय अपना
मिर तरु सम्मौन हिलात
धिर ब्यथा-ब्यथित चल मधुकर
तव भावों में खो जात
चल पथन सनन् सन् धरा
में भातुर हो तव गाता
भायुक अभिराम सुमन-दल
भमिनव सुपराग सुगता
भारव भ्रान्त सर-उर में
साईं स्मृतियाँ जग जातीं
उर वेध-वध भविरल हा
किर धार पार हा जातीं

कपित चित्रित सा, कुशकुट
 तव धाह-बाह कह उठता
 तब दारुण मौन व्यथा से
 उसका उर भी गा उठता
 प्रिय मिलन बस धाह मरी
 कल्पना के व्योम में खग
 बन निरंतर उड़ रही, पर
 वक्ष पर पड़ अधु-लड़ियों
 क्षमन करती धाह मरी
 हृदय धारा में घपछ
 उल्लास-जलगा पैरती
 शमीरता रूपी निराशा
 स न मिलती धाह मरी
 भास हय को मैं सदा
 सरपट भगाता जा रहा, पर
 हृदय स भगात कोई
 राक खता राह मरी
 हास के उछान में अभि
 राम अक्षुर पृटन पर
 पल्लवों के पूव ही तो
 भस्म करती बाह मरी

(२)

कौन किमक पास, रे कह !
 भावना भर-भर गृणों में
 विहग म कोटर बनाया
 उड़ रहा अनजान हा अथ
 छाड़ निज आयाम रे कह !

सुरभि से अठखेलियाँ कर
हो गया गद्गद् पवन था
ढठलों से उर लगा अब
ले रहा निश्वास रे कह !

प्रेम की वीपावली में
हँस पड़ा भव यामिनी थी
शून्य में कुछ डूँढ़ता सा
मौन जब आकारा रे कह !

(३)

चिर विदा की दुस्खद बेला
वियशता से कोटरों में
विहग - कुल निःशब्द सारे
म्लान मन, चित्रित क्रिये से
तरु-पटल स्थिर स्तम्भ हारे

मौन मुध-बुध शून्य मथुकर
पुंज चल उद्दिप्त प्रतिपल
शून्य नभ में ताकता सा
बहरो-दल ध्रान्त निश्चल

ध्रान्त निमल फल सरित् का
विरह से आया हृदय भर
मुख दिपाये अचलों में
मुकुल बेसुध ढठलाँ पर

यामिनी भर भर सिमकियाँ
जा रही होती व्यथित ही
मन्दिनी का तप्त मानस
हो रहा था तप्त-मथित ही

शून्य में ही टिमटिमाता
 मीम या नम-मी शबेला

(४)

दुख विहग का हाँ पुरातन
 नोद है यह हृदय भरा
 धारा से ही कुछ धवा धिरे
 खया की चिनगारियों में
 ताम्र जब ज्वाला उठाता
 साँस का भीषण प्रभजन
 जब मधुर जावन स्मरण
 मादामिनी की सोमहर्षक
 कङ्कड़ाइट में निरन्तर
 बरसते रहते नयन धन
 सब कहाँ से यह न जाने
 मौन ध्या करता बसरा ?
 नव उपा की मधुमयी—
 मुम्कान से जग कुसुम-दल पर
 अलि पटल अति मुस्करात
 हो निरन्तर प्रेम विह्वल
 चञ्चल सरित चल लहर—
 प्रतिधिविल चित्त से भर उदानें
 सुन्दर बखरव म रिभाते
 ख्योम धी को विहग चपल
 पर न जाने इस हृदय में
 क्यों नहीं होता सवरा ?

(५)

शून्य में अनजान ही यह
 शुष्क पत्ती उड़ पत्ती ह

प्रातः को हँसते न पाया
 स्वप्न-ध उद्यान म भी
 हो न पाया नीबु अथ तक
 आशो त-हु वितान मे भा
 पर प्रखरतम-ग्रीष्म लूझों
 में सदा अथ तक पला है
 चुन न पाई विहग बाला
 क नवल मधु गान बिसरे
 देख पाई कुछ न माधव—
 घट्टिका मुस्कान भी रे !
 पर गहन तम - जलद छाया
 से गई अथ तक छला ह

(६)

शेष क्या परिचय रहा अथ ?
 सिमकियाँ भर भर रगना
 दुखद जीवन की सुनाई
 कठ घर् घर् कर रह दुग—
 तत घासेँ दयदयाह
 हृदय भी था रो उग तव
 उड़ चले फिर हम चित्त को
 छाँघने उहास लक्षर
 विरह पीड़ा व्यथित विटपा
 को अनेकों आश दकर
 विटप भी था रो रहा तव
 सिर भिदा घगन से—
 निथल घरघ घे लङ्गदाये
 फिर प्रतिष्ठा में तुम्हारी

मोरी

निबम कितने ही विताये
मरु धरणों तले दब दबा

(७)

पद दलित पर्य की मर्मर में
विधु हीन निशा का करुण रुदन
पतझड़ विटपी का सुनापन
में नीरव गम की ख्या मान

तपित मू की नीरम कथिका
मुरझाये फूलों की सिसकी
गल-धभव कलि की करुण आद
आतुर पतग का हृदय मौन

व्याकुल सरिता का तट हताश
प्याम घातक का शान राग
उमड़ी बदली के धासू-कण
विरहा जीवन की हूक मान
मुझमे मत पड़ो, मधुप कान ?

(८)

अलि मम उर की शुष्क मुक्कल पर
भी आघो मैं इराधा
मूखी अति नीरस पैसुदा है
इनमें मनहर मकरद नहीं
नव चितवन नूतन रग मजुर
उड़ता पराग स्वरुन्द नहीं
अपने हमक उर का फिर भी
आघो कह सुन जाओ !
उर की आगा उर में ही ले
सिजन स पहल सूख गड

दाम सर्ग

स्मृतियाँ अब भी कुछ रेखा-सी
 उर में अंकित हैं कई कड़
 पहले की ज्यों फिर खिल पाये
 ऐसी तान सुनाओ !

(६)

अक्षि ! मूख चुका सब कुछ मेरा
 बस भावों ही केवल जलमय
 टूटे उर-खीणा तारों में
 जीवन के मधु आधारों में
 मानम द्रावी ऋकारों में
 बजती बस कदल कट्यालय
 उल्लासों की भी बात नहीं
 आता स पुलकित गात नहीं
 सुख की रिमक्तिम धरसात नहीं
 होता बस केवल छय पर छय
 सुख की बदली भी खली गई
 आशा-खीणा भी टूट गई
 कमरों अब उठतीं नई नई
 उर सङ्ग-सङ्ग करता अभिनय
 मिट गई हास की हरियाली
 बुझ गई रास की दीवाली
 धनधोर धन दुख की काली
 है धरम रही कर भव रहा प्रलय
 जीवन की स्मृतियाँ उर में भर
 भर भर भर भर भर भर भर भर
 बह रहा प्रवळ पादा - निम्नर
 आयतों में अतर तल्ल क्षय

मोरी

(१०) -

सुखमय जीवन में पल हुए
जानो क्या पर पीड़ा मधुकर ?

जीवन में घाया कभी नहीं
जी भर कर हँसने का अवसर
यहत रहते हैं हम भर भर
जानो क्या उम जलधर का उर ?

जीवन में जिसने कभी नहीं
सुख की छाड़ दखी यन्त्री
भारस हठांग उम पत्ते का
जानो क्या बरखामय समर ?

मन्ना के भीषण झोंका से
सुखमय उड़ गया नवल कोटर
चेतना शून्य उम नव रंग का
जाना क्या पीड़ा-वीदित-स्वर ?

(११)

मरे दर का शुक मुकुल मा
कहो मधुप ! क्या कभी खिलगी ?

पल-पल प्रतिपल सौरभमय कर
शतस्नल के गहन विपिन का
अतधान हुई जो सहसा
घाण्टादित कर ध्यया-भलिन को

बहो न शाह हुई सुरभि वह
मुझको क्या फिर कभी मिलगा ?

मन गिगा से नव जलधर के
रिमकिम रिमकिम खयाभिनय में

विहगा के मनहर कलरव म
मद-मद मलयानिल से रे !
पूछ भाँति क्या कभी हिलेगी ?

(१२)

मरे जीवन का सूनापन
उर चार घोर धा जाता है
नीरव नयनों में नल-कण बन
जीवन सम्मृतिर्याँ स्मरण करा
कर देता है दूमर जीवन
उर में अवीरल सुमता रहता
तीरा तीखा षटक सा बन
मानस अम्बर में छा जाता
घनघोर घटाएँ दुख की बन
अन्तर विदीण कर घर देता
कोमल तम मन पर स्यधा गहन
भयदायक प्रलय-बाढ़ सा बन
कर देता अति ही भारस मन

(१३)

बुदबुनों को कान जाने ?
गाल, धमक-हीन नीरव
ताप-बेमुध बहरो पर
भूज कर भा विहगा काई
धा न पाता चहचहान
पड-दलात नित फर्य्य मीरस
सुरभा-वाञ्छन सुमन दल पर

- १११ -

मीरी

नृत्य-तन्मय भ्रमर कोई
 आ न पाता गीत गाने
 जीर्ण पर्या विहीन गत-रस
 शून्य दृष्टलमय विन्प पर
 मृदुल तिनके छा न पाती
 गिराहरी कोटर बनाने

(१४)

पतझड़ विन्पी पीड़ा से
 दुस्विया बदली हो दती
 तापित भू भी भाँसू मे
 अपना संघल मर खेती

अविरल चौंकार मचाता
 दुग से बेसुध हो दादुर
 नतमस्तक पटे रहती
 हो मौन विहग शोकागुर

निसकी भर भर विपटा म
 साइखड़ा पवन टहराता
 चातक दारुण पाड़ा म
 अविरल ही रुदन मचाता

रह रह कर विपटी बेसुध
 मिर धुनते मान ब्यया मे
 नीरप पीकित हो पड़ते
 अपना पर पूछ सता मे

नि-रवासों से पतझड़ तर
 रो रो कर उठता घघर
 उसके भी खलती रहने
 नयनों से जल-कण्ड सर मर

मीरा

शांति क छाधार मगल
जा रहे ह वूर धड़-बह

(१७)

त्रिप से मुस्कान भर फिर
घुल गई नीरस लता भी
बाहु में अतु-राग का भर
गा उठी फिर कोकिला भी

विशु मुखद कर अशुभों में
हँस उठा फिर यामिनी भी
नील नभ स आ मिला फिर
धिरवती सौदामिनी भी

प्रेम विह्वल हो उग प्रिय
पा सरित् अभिसारिका-सी
रमा भी घनलय हुई फिर
नृत्य-सन्मय गाविका सी

नवल मौरम चल पड़ा
उमत्त सी फिर पवन संग-संग
घोड़ अघगुटन मिळी फिर
मुकुल भी मरुद-पी संग

फुलक चकी खग-कुमारा
विहग से अटलेलियाँ कर
हँस उठा तू से लहर मिल
प्रबल मुख स मयन भर भर

हाथ पर हृदयेश मेरे
कय मिलगें कान जान ?
सरमरु पर तिन बिगाने

(१८)

नव-नव छविमय शतदल शतदल
अविरल हँस हँस कर तरल सरल
हिसमिल खिलखिल कर नवल-नवल
कलि कुल भा मुझे खिला न सके

जगमग जगमग जगमग जल जल
नोरव तममय डर में अविरल
अगणित, अमीम पल-पल प्रतिपल
ठारे भी ज्योति जगा न सके

मादक-मादक उर हर मध स्वर
में नैसुध अविरल गा गा कर
प्यार प्यार नववय मधु कर
दूटा उर-वाण घना न सके
प्रियतर सुखकर मधुमय शैशव
में पल हुपू नव नव अभिनव
माहर मनहर कर कर कलरव
नरुचर भी मुझे हँसा न सके

(१९)

सूना कलियों नभ में उद-उद
कहता गग से मत प्यार करो !

आशा क स्वर्णिम सपनों का
ढाला पर हो मधु-गान गगन
भग बालाघो ! मत नीद रघो
नभ में ही पल प्रसार करो !

अपनी अभिलाषार्थी को ल
अपगुन में हा दिपी रहो !

भोला नव उर ल अलि-गण से
कलियो ! भौंभे मत धार करो !

वृक्षों की शीतल छाया में
ही बठ खगों के गान सुनो !
नव धीचि-बाव से डग पर डग
भर सरिते, मत अभिसार करो !

नीरव निशीथ में रातदल पर
ही घेठ आत्म घिनन-लय हो
भायों में बसुध हो रजनी !
तारों से मत शृगार करो !

(२०)

उर पतझड़ विन्पी के नीचे
करण विरह सध्या बेला में
भद्र तार जीवन धीया पर
एक बात भा कह जात तो

सृष्टियों की किलमिल किलमिल
चीय ज्योति का आलम्यन ल
नयनों की निश्चल सरिता में
एक बार भा यह जात तो

नीरस वैभव हीन पर्य पथ
मे मर्मर चल पग खनि स आ
तम-भय सूरों उर झुरमुट में
एक रात भी रह जात ता

(२१)

पर अभी तक य न चाये
साग्धि छ ह्याम धो भी

चल पड़ी अनजान ही मैं
 फँक कर गल हार मोती
 सब, निराशा ध्यान ही मैं
 डग निशा ने भी बढ़ाये
 ताकती ही नभ उपा मी
 चल पड़ी, खग भर उड़ानें
 शून्य में ही बड़े अचिरल
 अमर कितने ही न जाने
 कज से था गुनगुनाये

घाट भर संध्या गई—
 कुम्हला मुँदे पंकज नयन भर
 जल उठे दीपक निराशा
 से बिटप की ढालियों पर
 विहग फिर था चहचहाये

(२२)

ढ ठल पर रो उगे कोकिला
 दुखी धृद सा धर्यर धधर
 कॉप कॉप ञ ठल हो नन सिर
 अपनी दुखमय हीन दशा का
 अनुमोदन कर उठा सिर हिला
 यिलख यिलख कर व्यथा-कहानी
 ग्ध हृदय में लिये लिये ही
 येमुध हा गिर पड़ा भूमि पर
 महसा नारय पूल अध खिला
 नारस नृण प्रतियाँ पर्यं की
 हीन दशा से स्पृतियाँ जागी
 बाल उठा अतर से कोई
 रे हम जग में किसे सुख मिला ?

भोला नव उर ल अलि-गण से
फलियो ! भाँखें मत घार करो !

वृक्षों की शीतल छाया में
ही बैठ खगों क गान सुनो !
नव वीचि-वाय से डग पर डग
भर सरिते, मत अभिसार करा !

नीरव निरीध में रातदल पर
ही बैठ आरम चितन-लाय हो
भावों में वसुध हो रजनी !
तारों से मत शृंगार करो !

(२०)

उर पतझड़ विष्पी के नीच
करण विरह सध्या बेला में
मन तार जोयन वीणा पर
एक बात भा कह जाते तो

ससृष्टियों की मिलमिल मिलमिल
पीण ज्याति का आलम्बन ब
नयनों की मिश्रल सरिता में
एक बार भा यह जात तो

नीरस धैमव हान पर्य पय
से मर्मर चल पग-ध्वनि स आ
तम-मय सूख उर झुरमु में
एक रात भी रह जात तो

(२१)

पर अभी तक व न आवे
साग्निहा ल खोम धा भी

चल पड़ी अमजान ही में
 फेंक कर गल हार मोती
 सब, निराशा ध्यान ही में
 डग निशा ने भी बढ़ाये
 ताकती ही नभ उपा भा
 चल पड़ी, खग भर उड़ाने
 शून्य में ही षडे अचिरल
 अमर कितने ही न जाने
 कन मे आ गुनगुनाये

आह भर सप्या गइ—
 कुन्डला मुँदे परुज नयन भर
 जल उटे दीपक निराशा
 ल विष्प की शालियों पर
 विहग फिर आ चहचहाये

(२२)

डठल पर रो उगी शोकिला
 दुखी पृथ सा धरधर धधर
 काँप काँप डठल हो नत सिर
 अपना दुखमय, हीन दशा का
 अनुमादन कर उगा सिर दिखा
 बिलास बिलास कर व्यथा-रुहाना
 दग्ध हृदय में लिये लिये ही
 पमुध हो गिर पदा भूमि पर
 सहसा नारय पूज अध सिना
 नारम नृण घतनियाँ, पर्यं की
 हीन श्या से स्तुतियाँ जागी
 बाल उठा अतर् से कोई
 रे हम जग में किसे सुख मिला ?

फोटा घब नहीं बनाऊँगी
 हाथी टूटी, पते विश्वरे
 साथी भी टूट गय सब रे
 उर में टूटा अभिलाप लिये
 शहर में ही यह जाऊँगी
 उर-मौन ध्यया से शॉसु भर
 जब मुझे निहारेगा शहर
 मेरा अपना परिचय मैं भी
 शॉसु में ही यह जाऊँगा
 गा-गा कर निशिदिन आत्म-गान
 निजन नम पद्य पर कर प्रयाण
 जग-बधन-स्तर से ऊँची उड़
 मैं शून्य-स्त्रीन दा जाऊँगी

यह जान सक क्या सुख को ?
 कष्टज घरणों के नाचे
 दुःख-द्वारण पीडा सह
 जीवन में जितने दग्धा
 भीषण-दुःख उरका मुर का
 जीवन में अद्विजल रा रा
 कर कल्या-धनु बहाय
 दग्धा जितने परित हा
 बम केपल दुःख हो दुर का
 शा-न्ना कर नीम - निमोली
 तोदे जीवन क दुःख

जीवन में जो प्रतिफल हो
मधु-श्रात्र-सुस्वाद विमुक्त हो

(२५)

एक बार भाँटा जाते तो
पीर्यं जीण कुछ पस्तुदियों में
जीवन का अस्तित्व छिपाये
विन्दो की गहरी छाया में
सोये सुमन जगा जात तो
तन्नु बितानों में अपने ही
उलझो सिकुड़ा बँधी निरन्तर
तर आधित ही लतिका की
पर-वशात्ता दूर भगा जात तो
भीषण कृष्ण से पल प्रतिफल
उधर उधर उड़ रहे ध्योम म
सशोपित नीरस-जीवन पयों
को पार लगा जात तो

(२६)

कब न जाने प्राप्त होगा ?
रिक्त सरिता म न जाने
कब खिला गलजात होगा ?
गृह-पल से दबी अविरल
शूल-प्रस्तर-तन-मया इन
कन्दराओं का न जाने
कब हृदय अवदात होगा ?
जाँघ पयत-व्य निशिदिन
दूर तक घन विपन में भी

मीराँ

(२३)

काटर अय नहीं बनाऊँगी
हाकी टूटी पचे विखरे
माथी भी छूट गये सय रे
उर में टूटा अभिलाप लिये
अबर में ही यह जाऊँगी
उर-भान व्यथा स आँसू भर
अय मुझे निहारेगा अबर
मेरा अचना परिचय मैं भी
आँसू में हा यह जाऊँगी
गा-गा कर निशिदिन आरम-भान
निजन नम पथ पर कर प्रयाण
जग-वचन-स्तर स ऊँची उद
मैं शुन्य-खीन हा जाऊँगी

(२४)

यह जान सक क्या सुख का ?
ककरा चाणा के भीचे
दव-दव दारण पीड़ा मह
जावन में जिसने दगा
भीषण-दुख उल्ला मुग का
जावन में अरिल रा ता
कर करणा-अधु बहाय
दगा जिसने परित हा
बम केवल दुख ही दुख का
गा-गा कर नीम - निमोली
तोड़ जीवन क दुग्नि

जावन में जो प्रतिपल ही
मधु-शाम्र-सुस्वाद-विमुक्त हो

(२५)

एक बार भी आ जात तो
नीण नीण कुछ पशुदियों में
जावन का अस्तित्व छिपाये
विष्णों की गहरी छाया में
साथे सुमन जगा जात था
तन्तु वितानों में अपन ही
उलझी निकुड़ा यँधी निरन्तर
सर-आश्रित ही लछिछा का
पर-वराता दूर भगा जात था
भीषण कफा से पल्ल प्रतिपल
इधर उधर उड़ रह व्योम में
मरापित नीरस जावन पणों
को पार लगा जाते था

(२६)

कब न जाने शक्त हागा ?
रिक्त सखिया में न जाने
कब गिला गलजात होगा ?
नृण-पल्ल से दबी अचिरल
शूल-प्रस्तर-वम-मयी इन
कन्दराओं का न जाने
कब हृदय धवदात हागा ?
लौघ पपत-मट निरिग्नि
दूर तक बन विजन में भी

सुरभि-सुरभित कब न जाने
यह दिगत प्रपात होगा ?

(२७)

यह क्या जाने बशी-रव को ?
विग्नी की सघन रिखा से ही
देखा जिसने जल्लठे वष को
जीवन की धुंधली सभ्या में
भी निज सौरभ द दे अविरल
प्रतिपल ककरा हिम-कण-कण का
आघात सह जो नीरव हो
पणे—लतिका—किसलय—विहीन
जिस विग्नी की शखाओं पर
जीवन के प्रातों से लेकर
धव तक न हुआ खग कलख हो

(२८)

पाकित का आह कौन सुने ?
अलि-गण भी सारे रुठ गये
सहवाम तथा सौरभ ने भी
पत्तियां साथ हा मिनी में
मिल गये मधुर सुग्य सपने भी
अति गत-वभव भारय नारस
अस सुमनों को कान चुन ?
किसलय-दल भाय-साय सूखा
स्वर्णम हरियाही जीवन का
कड़क टलों की टोकर स
मन में ही आठ रहा मन की

एमे कर्कश यितर छितरे
तिनेकों से कीर कौन चुन ?

(२९)

चले चलें उस पार विहगम
चला चलें उस पार !
ललिका कोई विहग प्रशंसित
जावन पर मद-माता है र !
काई मन में भाग छिपाय
नरता दाहाकार विहगम !
फूल कहीं यौवन म फूला
भलिना स मुस्काता है र !
कहीं विरह स येसुध कोई
राता बारवार विहगम !
पद कहीं किमल्य स उमरा
हंस हंस नम में इलाता र
काह उर भमिछाप छिपाय
होता सखाहार विहगम !
नय मधुकर पर कलिका कोई
यौवन न्यादावर करता र !
काई मटक मटक करता—
कौंटे कौंटे स प्यार विहगम !

(३०)

ऊपा की भंगड़ाई म
अंबर बाला मुस्काता
भलि छेड़ छाड़ से पकड़
का कलिका मौन छजाती
जब चिरक-चिरक प्रिय-स्वर में
रग बाला विहग लगाती

मीरों

स्मृतियों विद्युत् रेखा सी
 तव उर पट पर लिख पावों
 चिर विकल विटप नय लता
 निश्वासों पर निश्वामें
 उमकी मिल जाती तापित
 निश्वासों में निश्वामें
 निश्वासों का लूझों स
 उर क किमलय कुन्हलात
 अचिरल झर झर पल धारा
 तव भयन-अलद वरमात

(२१)

मत कलियो ! अमिमान करा
 दा तिन क हा यावन का
 कुछ पाकर इतरा जाना
 क्या ध्यय रहा जावन का ?
 मत अलिया ! गुण गान करा
 दा तिन क हा यावन का
 नित स्थामिमान गेना हा
 क्या ध्यय रहा जीवन का ?
 दुकराय गात नित पर
 गुण गान रहा यावन का
 अपमान कराना ही यम
 क्या ध्यय रहा जावन का ?

(२२)

काई पर-उर का क्यों जाने ?
 गन-बैनय मारम कलिका को
 गुंजिन मधुकर क्यों पदघाम ?

शुचिसरल, सजल सुरमित अभिनव
 सुमनों को नाच तोच मधु पा
 पखुड़ियाँ भस्त व्यस्त होन
 पर काट हगे क्यों पछताने ?
 नम में विकसित अभिलाषा-मय
 प्रतिपल नय किसलय स हैसमुख
 उन जीण-जीण पणों को मन की
 विटप लग क्यों घतलान ?

(३३)

र मन ऐस सुमन घयन कर !
 बिहग-दोलियों में हिल मिल हैस
 रिमक्षिम रिमक्षिम क सतक पर
 घपला का मनहर नतन भी
 दला जिनन नहीं नयन भर
 ककश ककड़ का ठाकर स
 ग्राहि-ग्राहि कर कर शूलों स
 जायन का नित ब्यथा-कदाना
 कहत है जा विजन भयन पर
 रह रह रह रह पल पल प्रतिपल
 सुग उर में निनक घम यह
 उटता है अभिलाषा कजल
 कव सायेंग महारायन पर

(३४)

कहाँ मधुर मधु गान यहाँ त्रिय !
 निवल विटगों का उलाह
 नारव निजन पय पर पल प्रतिपल
 भपला छनिझाभों का करना
 निरस्कार पवमान यहाँ त्रिय ।

सरल सुमन-एल नाच नीच
मकरद गोप अतिनिष्ठ कीट-कुल
अपन गदित-जम जावन पर
करता ह अमिमान यहाँ प्रिय ।

सदा दूर अति घूर विजन में
सूख ककश दल-एल क
दा दोनों पर हा लुटमा
रहता रग का मधु-गान यहाँ प्रिय ?

बिटपा का शाखाओं पर
निमित्त नाहों में शृयक्-शृयक हा
कैरे कलरव-रत बिहगों का
डूँध नाच का ज्ञान यहाँ प्रिय ।

(३५)

प्रिय, धैय घरुँ अय कितन जिन ?

ना जानों का हा लाम लिय
उड़ रह स्योम में बिहग-वृ-ड
गिर रहा निरंतर म्दुर पणों
पर हा प्रतिपल तरल मुद्दिन
किमलय बल्लरियाँ बिटपों क
औलों आग हा सूख रहा
जावन क प्रयूपों में मा
हा रह निरन्तर ताप मड्डिन

भ्रंशा म उगड़ पाधों का
पय में णकाका हा परयश
अधरिला होदियाँ मरत मृग्यु
हा निरग्य रहा ह जिन गिन गिन

बिटपा का शाखा शाखा पर
जजर तापित तापित, भीरस

दशम सर्ग

गिलहरियाँ धूम रही कितनी
ही सदा न जान कोटर विन

(३६)

रजना का झिलमिल झिलमिल
साढ़ा क भवगुम्न का
रजना-पति चुपक चुपक
खाल जब पुलकित मन हा
जब मुद्रित कुमुद कलाएँ
ठट जातों अगढ़ाई छ
जब धार-धार मँडरात
मधुकर गुजन घाणा ल

चुपचाप धकित सा लतिका
सुखमयी भाग ल मन में
पुलकित हो जब बँध जाती
विटपी क भाङ्गिणन में

जब धकित मृगा सी नारन
सग-बालाएँ अलवछा
लज्जा स नत मस्त्रक हो
दरें विध का अगमना

जब शाल कर-किरणों में
हँस दता प्रिया शपा का
उर-मुमन मसल तव महमा
भा जागा याद किता का

(३७)

निकला भ्रम विश्राम
जलद जास का निमिर खोर व
भाय ल मुस्कान

मीरा

हँस ह्याम क शून्य ह्य्य में
 तार फिर अनजान
 तरु में था लुपचाप पवन
 निानता था भविराम
 विहगा क बलरव में करता
 था लतिका विश्राम
 म धरता में गदा ना रही
 थी लजित लुपचाप
 उनन मरा आर निहारा
 कर यह प्रमाहाप
 आँसु मिचाना भल्ले मगि '
 आया है मधु-मास
 मन आँसु मूँनी अपना
 द्विपे फहीं घ मान
 मन मा झण्डा रग राल
 रता परित मान
 पला था नारयना कवड
 मतति हिला झण्डा एक
 वही द्विप है साथ ह्य्य न
 क्रिय विचार अनक
 मधु-यन क उस नव निकुंज में
 रूप-रुग था धार
 हर मर सुरभित घृताँ पर
 लतिका चारों भार
 पण पण, कण-कण में दूदा
 फिर मा दुई हताग
 दूर जता हा मूल पल य
 कलि किमलष भविराम

दशम सग

सुमन, पराग, सुरमि, छतिकाए
 विटपी नवल जलाम
 नौदों में रग वास नहीं था
 मादकता था मूक
 मथर गति से गई यहाँ मा
 लिय निराशा हूक

धूम रहा था मधु वन नयनों
 का भाग अविराम
 साच रहा था यहाँ कान्त क
 टिपन का क्या काम !
 पर, वे शुष्क स्तवक चुनत थे
 छाया या उल्लास
 निकला ध्रम विश्वास

(३८)

सरिता गान्त किनार
 शान्त, मनाहर विमल हडु में
 अनुरक्त थी यामा
 भलि स दिना मिली था
 क्षेत्र का कलिका अभिरामा
 सौरम में साया था निमल
 मंद पवन चल, गाल
 हूलों का हडु बाँहों में था
 सरिता का भवस्तव

उनकी मधुर प्रवाशा स
 मव आगा उर में घारे
 हरा वृष पर क्षेत्र था मैं
 जब मैं पैर पसार

मीराँ

जलधर सुधा विवर्द्धित जल में
 करत ये बठधली
 निरख निरख करव का कलिका
 सज्जित या अलबला
 खाया या नव मधुकर रूपा
 कलिका का चितवन में
 मं नारव, नव चकित मृगा सा
 रत थी अवलोकन में
 मान उल्लसित मघर गति से
 ध सुपचाप पघारे
 भ्रम में भूला देख मुझे, पर
 चले गये मन भारे

मिलन प्रताप्ता की पाइ स
 भूली भाँस सुला जब
 पद गमन पर चिन्ह दिखाई
 पय पर भाँस डुला तब
 हूक उठी मानस में गहरा
 भूस रग पद्यताप
 हत प्रम नीरय यून्य रगों में
 आँसू कण दो आय
 दाइ पद्मी पागल सी चिन्हों
 के पोद्य मन मार
 पर, व मिल न सके फिर, दूँडे
 वम उपवन पय सार

(१९)

आऊँ, नम का गीत सुना ता
 सुरमि-पराग मर सुमनों से
 अब तक भाँस मिथीना खेनी

सतत कुंज में इधर-उधर उड़
कलि से का कितनी रँगरेली ?

कलि-कुंजों में मुमन-पटल पर
दियस बिताय, निशा बितायी
मधु-ऋतु में भावास रहा, पर
काकिल-स्वर पहचान न पाया

कितना द्रैका क्षणक्षण प्रतिक्षण
पर कुंजों सं क्य निकल तुम ?
इसका निणय कौन कर भय
में पगली थी, या पगल तुम ?

जीवन क मधु-क्षण बितर है
आऊ नारव मीन चुना ता

(४०)

यह भाया, पर वह मिल न सका
बिष्णुम् धमकी उर चार चार
कंगों में फिर घघर घघर
मारव नयनों में भा निकल
उर क झाकर झर-झर झर-झर

क्षण-क्षण में हूक लिय गहरा
दा नि शायें मारयता में
निर्म्याम गगन की छान दूड
दब दब दब दग पय पर घाम

सहमा उमका पदघाय गुना
पर से दग-गुलगा हिम म मकी
दंका भाया पर यह उमका
बिगारा कलिका फिर मिल न सका

मीरा

(४१)

रुक गया भवानक हा गायन
या गूँज रहा नय-बाणा क
चल तारों पर मकार मधुर
चित्रित स ये अविचल बडे
ये पास श्रवण-रत्न मान प्रचुर
में समुध थी निज गायन में
शुपचाप चल पद ये उठ कर
जब देग न पायी उन्हीं हुई
मृच्छित छूटी यीणा सावर
रग गुलने पर दला, मस्तक
गादा में था, महलात ये
मुक्त-मुद्रा था गंभीर नयन
नम्र में ये रह रह गान ये
रुक गया भवानक हा गायन

(४२)

मैं मूल गई घाणा-वाग्नि
हट गई स्वरो स अगुलियों
उम ओर कुसुहल लिय स्वरित
जा रग नयन महमा उरमुक
झट मान हुए चल तार क्षणित
हैं बौन बड़ी क्यों मान, नहीं
धादा सा मी कुञ्ज नान रहा
स्वर्गाय अलाङ्कित त्रिभ्य तत्र
वम गुंजन का हा ध्यान रहा
दग्नाप्यमान अनुपम प्रकाश
में बिम्बर गुंजन क मधु कण
भर भर उर-प्याज में फर कर

बसुधपन स चिर आस्वादन
 में मूल गई वीणा धादन

(४३)

चल पद दगों स रग जल-कण

षट् चण भर नीरव, मौन रहा पथ पर पद चिन्हा का देखा
 अम्बर क मघाईश्वर में चमकी विद्युत् का-सा रेखा
 प्रतिपल विस्तृत नम-मङ्गल में उड़ उड़ पद्मा-गण गात थे
 कलिका मधुकर, संफुल्ल कुसुम लतिका विटपा लहरात थे
 उर में अगणित जलधाह मिद्धे स करण दुखद राजन-तजन
 नि श्वासों स चिर षकाका, पादित मानस क क्षिण क्षिण वण

चल पद दगों स रग जल-कण

(४४)

हा, बात गन् यों हा क्या

मलयानिल शुचि शुपचाप घडा स्वप्निह माशों में राया सा
 लहरें घचल अभिराम उगीं मरिना में झलक पडा आगा
 सग मान हुए मलयानिल ने शुपचाप किया सारम मचय
 अनुकरण किया अलि ने, कलि न दिखलाया लघमय चल अभिनय
 लहरें घचल अभिराम बड़ी नतनमय गतिमय पादित पर
 यह गुँज गया गायन परित कुनों स झन् ज्योंहा रणा
 हा थोत गई पौहा क्या

(४५)

हृदय धार कर धरला तम का करता है मन-माहक नतन
 नम क षकाकी बान में सुखदाया जम्भर का गजन
 मू नारव ह, विह्वल गद्गद्, कण-कण में मारत उड़ता ह
 नीरव जल में मोदक मनहर रिमभिम का पुद्-पुद् उटना ह
 त्यरित लुढ़क जाता है तरु-पणों पर जल-कण गिरना-गिरना
 दल, साथ बहों राता ह' किना जावन का भरियरना ?

मीराँ

(४६)

दुख-झुझा स जब जीवन की नाका दोहरे इगमग-इगमग
जब स्मृतियों का दुस्तर सागर हो जाये अविरल हो तम-रत
निःश्वासों का पतवार लिय तब एक बार तुम भा जाना !
उड़ चलें सौंस की आँधा म कलियों की पसुदियों पर-फर
जल उठे अरिल विरहानल स जब दर-बहुरियों भू धू कर
भारव नयनों में आँसु बन तब एक बार तुम भा जाना !



एकादश सर्ग



प्रातः का शीतल वायु रचिर
मानी मानी सा वहती है
मथर मथर ज्यों कहती है
जीवन प्रवाह का अन्त नहीं
गति का निस्साम, अपार अनिर
कलिकाओं क मधु का संचय
वह प्रतिपल करता जाता है
अधल भरता हा जानी है
विह्वल कर दता कमा कमी
मौरम विनाश का माया मय
करि क पत्रों में भलि गुदन
मय मधु का चिन्ता में साया
रजना में जा थक कर साया
जब हा जाता है मृत मृषा
भतर हा भाता है उन्मत्त

वह स्पन्दन या कि तृपा कृष्ण ?
 भर जाता मधु मौरम सं मन
 तव थकता नारस बनता तन
 पलों का घबलता पाती
 गुंनन क्या मध-भभाव-व-धन ?
 परिहास छहरियों का तट पर
 अलहद बन क्रीड़ा करता है
 दुदहन सा घोड़ा भरता है
 प्रतिदिन की क्रीड़ा क्या अकित
 रह पाता ससृति के पट पर ?
 लहरों पर अस्त व्यस्त से तृण
 अज्ञात दिशा में तिरस्ते हैं
 निर्वास शून्य से फिरते हैं
 चबल अघाघ गतिमय जल में
 जा नारम यह क्या कमा मसृण ?
 भरिता, मुवायु का सम्मिधन
 जिमम अतस्तल गाता है
 नतन का पार न आता है
 समिलन हृष का चितरपन
 दादपत रह पाता क्या वह वृण ?
 चबल जल का मजुल कल कल
 किम भार स्वत ही बढ़ जाता
 जल स्वयं जान क्या कुछ पाता ?
 गतिशाल गमन या प्रगति गमन
 चल चल या पल प्रतिपल कल-कल ?
 लहरों पर तर रह बुद-बुद
 जल में अठगला करत है
 उल्लाम-विलान निगरत है

एकादश सर्ग

अज्ञात वेग की घेला में
रख पाता क्या अस्तित्व विरुद्ध ?

सरिता क अतस्तल-तल में
प्रच्छन्न कौन क्या है रहस्य ?
यह जान सका है तार-सस्य ?
उसकी प्रकाश-तम उद्गमता
प्रतिकृतियाँ क्या सत्या जल में ?

इस सरिता का आदिम उद्गम
जल में बहन वाला पत्ता
जिसकी जल में न बहो सता
पा सकता है जो विघ्न महा ?
क्या नहीं कल्पना उसकी भ्रम ?

गमार स्तरों क अतर में
किसन अविराम निवास किया ?
दल-दल में कैम श्वास लिया ?
क्या पूर सका ये नदा बड़े
सरिता प्रवाह का गति सर में ?

सुमनों क अतर स सौरम
मलयानिल अघल में छिपना
सून अनत में जा छिपता
पसुदियों का नारसता में
छवि भर पाता क्या अरणिम नम ?

नारस, वृश पणों का डटल
मलयानिल में परवण हिलता
उसका क्या रूप कहीं मिलता ?
यह वृश स वृशतर शुष्क बन
पया है बयार यह दायानल ?

मार्ग

तराओं का भावाकुल मानस
उत्प्रेक्षित होकर छा जाता
शास्त्र श्रौंका कितना माता ?
इस भावाकुलता का सुंदर
करता क्या मूल्य दिगाएँ दना ?

तर-शाखाओं का आन्दोलन
छविमय गुञ्जित नर्तन करता
धम क स्वेदों का जग हरता
सबका मिलता उल्लस किन्तु
क्या छिन्न मिश्र उसका बधन ?
चल जल प्रयाद-गति में चल घर
कर पग विपरात घुमात है
स्वर-नाल मूल रह जाते हैं
उल्लसन का गति विधियाँ सजन
या वजन की भ्रमा पल मर ?

अम्बर का झिलमिल ग्रह-मडल
पल में प्रतिबिंबित होता ह
रत्नों म तार विरोता ह
सामित जल क भवस्तल में
विस्तृत प्रकाश जाता ह बल ?

संशून्य अदशित अम्बर-तल
नीला नाला हा लगता ह
या वह नयनों को उगता ह ?
हा भयन भाँवि खत सधमुध
आकर्षण इतना अधिक सरल ?

कल जल पल प्रतिपल तारो-नन
कूलों में वदन दिपाता ह

एकादश सर्ग

उस ओर दौड़ ही आता है
गति क घातों स दूर गमन
तीरस्थ बने रहना जावन ?

नम का कोना कोई रक्षित
प्राची बतलाया जाता है
या पूव उदय कहलाता है
वह मूल उत्स या प्रगति-घात
किरणों की गति का महा महिम ?

अरुणोदय-बला की छापी
भवर-तल में छा जाती है
कहत है ऊपा आती है
वह स्वप्न-रस या दिनकर के
मस्तक की कोई लिपि काली ?

रवि-गति की प्रतिफल चंचलता
मसृति में ज्योति छुटाती है
अग्धा जगती मुस्काता है
वह स्वर्ण-हस हैमता चलता
या ताप-तृपाओं में जलता ?

मध्या-अघल में अस्तगत
रवि गतबैभव सा लगता है
या भंघकार कुछ उगता है ?
वह उसक जावन का इतिधा
या जीवन का संगति चित् सत् ?

विहगों क कर्मों का कहरव
ऊपा का स्वागत करना है
वन-उपवन का मन मरणा है
सपनों का मंहुल चिंतन या
आगत बेला का स्वय भमिनव ?

बृन्तों पर घटे एग दम्पति
जग की लीला में तन्मय हैं
आयागमनों से निमय हैं
विधान्तिकाल या परों में
सचित की जाती अभिनय गति ?

नम के सून मन का मन्थन
पंछी उड़ उड़ कर करत हैं
अविरल स्वच्छन्द विचरते हैं
अस्तित्व विहीन, भाश्य यस्तु
का हो सकता कोई प्रन्थन ?

एग सम्मलन से रिक्त विटप
नारय, मीरम से छगते हैं
नीदों में बच्चे जगते हैं
संस्पृति का छाया स क्षण भर
हा सकता दूर कमा भातप ?

अंबर से भा नाथ भू पर
पक्षा-नाण दान चुनत हैं
मिटा में घोंघें चुनते हैं
आधार दान उड़ना दया
कर क्या न सतत जावन दूमर ?

नम क ऊँच ऊँचे स्तर पर
चौलों का दल उड़ता जाता
भार धीर उड़ता जाता
जग क प्रति उदात्तानता भति
ता क्या यह अतरिक्त सुस्तर ?

उपर का भार निमग्न नयन
उर में नवानता भरत हैं
उत्पाद अधिक एा घरत हैं

कवल ऊपर की ओर गमन
ह मर्या सवागाण भयन ?

जल में उठ-उठ कर लहर-लहर
घनुलाकार मँडराता है
जल में हा छय हो जाती है
ममृति उपकरणों क बाहर
जीवन सकता है कना ठहर ?

बुद्बुद्-अतमन का परिघय
घचल लहरों में भंतर्हित
ब्रह्मा-नतन में गूढ़ निहित
अस्थिर प्रवाह में नावों का
हो सकता है सुन्दर सचय ?

ऊषा की आदिम स्वण-किरण
जल अतस्तल में धँसती है
कटक शूलों में फँसती है
विपरात दिशा में यदत है
जीवन क दो भ्रममान धरण ?

किरणों के तारों के कण-कण
गहरे तम में मुस्कात है
आलोक कहीं स एत है ?
जलत रहते भविराम यहाँ
अमिलापाओं क नीरस तृण ?

दिनकर का मय भाट्टित घनुल
मन क मन का हर तता है
पलकें विश्राम चाहती है
भाम्नि शान्ति द्विमुखा शामा
में जीवन का निमाण विपुल ?

मीरा

आलोक शिखा का अवरुद्ध
नम स घरती पर छाता है
नाचे नाच ही माता है
प्रतिफल जीवन बहता है या
सदासा-मुक्त गतिशील धरण ?

भूतल-सीमा के पार चित्त
मरुति का कोई रेखा है ?
नयनों न भाग देता है ?
कृपान्तर्वासा का क्या कोई
अमिराम वास्तविक ज्ञान गतिन ?

प्राची पश्चिम दक्षिण उत्तर
संस्कृति के काम कहलात
मूल मूके को बहलात
अनुमान याकि वस्तुत सत्य ?
निधारित या कि प्रमाणित स्तर ?

क्षण, घटिका, दिवस माम बेला
जितम होना है बाध यहाँ
बेला का सखा शोच यहाँ !
मरुति-सद्वेला - परिचायक
या स्वत चिन्तना का मला ?

बहुरिपों सफुल, सजल हरिताम, चण्डा
त्रिदमित मुकुल विमोर रक्त-नालाम सुधबला
कुचिन मरुति प्रदान मसृण सादल सामोपम
पल्लव-मधुर-अधर-दल रागादण अंतर-रम
नव कुम्भल-भुजवग्ध मृग-मग्ध गतिमय
परिमल पल पल चंचल कल वाताम प्रीतिमय
सादलता-शु पल तुदिन मुक्ता-कण-प्रियत
कलरव रिनग्ध अधर मुक्तारण गुत्रित, स्पदिन

मुक्त समुत्थित घृत कान्त सञ्जलान्त, विवदित
 किसलय-चंचल-अचल तल खग शिशु सस्पदित
 विस्तृत मुरमित अन्न श्वास घल मुक्त घनुदिक
 नवल-नीलिमा-दृश्य-तान स्वचर-कुल स्वगित
 निक्षर-क्षर-क्षर-क्षर-स्वर नव कलरव सगुम्फित
 रेणु घेणु-स्वन स्वण-आल-गत अवर लुठित
 मुखरित कनक विहान हास्य उल्लसित, उमगित
 ऊपा अतर प्रान्त शांत मुख भ्रान्त, तरगित
 अभिनव आशा अभिलाषा, विश्वास सुभाषित
 सपुट वद्धा धद्धा मर्तित, मुक्त प्रकाशित
 मुक्ति मुक्त उच्छाल ताल परित गत वधन
 मू, नम, जल उ-मुक्त, मुक्त धन, मन, स्वन, स्पदन
 किन्तु आज मानव धिर पादित, दूर न वधन
 आज घनुदिक छाया हस्तत सक्रन्दन
 सता, पुष्प खग, भृग सकल स्वाधान धिरतन
 संमृति का मुन्दरतर धर पर, नर धिर उ-मन
 जगती क अतमन में विस्तृत कालाह्न
 निमिर निराहित शानि-कानि स्वर्णित उदयाधन
 भूति धूमरित ध्याम्न भ्रान्त भविष्य घनुदिक
 कुदा मधित धी-रित विकल कल गगदल स्वर्णिक
 र्वय कटकाकाग, जीग, संशाग, शुभन तम
 भुम्भु-भृगित गाल-गग-गग विरत भांगम
 निष्कर-ग्वर-गगि वृष्ट, बद्ध, पापाग विषामित
 मय भृष्टर श्रियगाग, प्राग गगप्राग, भमानित
 तर माग्ग वर हीन मूनि, शक्य बं पपरित
 मयन भयन-गगगम, प्रया निक्षित उग्ररित
 प्राग प्राग गगप्राग, शक्य, संवृष्टित भयिकमित
 मनि गगप्रति धानि-श्रीन, कामना श्रम धूमरित

मीरों

क्षुब्ध क्रुद्ध, गति-मुग्ध लहरियाँ, पीत भयाङ्कल
 निस्सहाय निरुपाय, हार तन्मय जन-सकुल
 धार भार पतवार हार कूपार पार - तन
 पट झरत, तट विकट प्रकट परित जलधर-जन
 निमल अविचल निस्तल अम्बर भयाङ्कर
 घबर घबर घाप, तोप सताप काप हर
 यिद्युत् रता क्षीण दान ठम खान हानतर
 मामाकार विकार क्षार ससार धार शर
 मूनापन, निजन धन पत्तन, नारव वैमव
 गतोल्लास, नि श्वाम पाग विश्वास क्षिप्त गव
 दावानल उज्वल अविरल चल मवल अनगल
 धूम धूम ज्वाला माला जाला, कालांचल
 तृण-तट-क्षता प्रतान म्लान आभ्रांत पक्षान्त मन
 सरित हरित-जल गनकक्षकल निचल निस्तल तन
 शुष्क, रष्क पापाण प्राण सगान-लहर मृत
 तट जल पट उद्भ्रित प्रकट घटान विनिर्मृत
 उपत्यका मपतित कुपित पापाण विश्वरल
 बालाङ्कुर उर प्रान्त शान्त सशष्ट भवचल
 निला रण उद्दुष्ट चड दूवाचल अत्रर
 अधित्यका प्यसाधराप, मुनमान खंडहर
 महापान पवमान गान दिग दिगत शक्ति
 अम्न-व्यस्त परिश्रम्य-व्यस्त सध्यम्य प्रकंपित
 कशरण पण विषण, सधरण दगमग दगमग
 सभ क्षम मव-वृक्ष-कक्ष विच्छिन्न, लिख मग
 क्या धा युग स्वण शब्द घट्ट आदिम सुरमित ?
 स्वण-प्रात में हाता हागा कष्टरव मुम्परित
 उड़न होंग मुज क्याम में विहगों क दक्ष
 भंगमन में बहती होगी मरिता कल कल

समता का समतल प्रवाह होगा शिव निमल
 जिसमें सत्यासत्य, अधर्म धर्म, निश्चल छल
 पृष्ठाकार भनघ भघ, ईर्ष्या स्नेह, मुघा विप
 स्वप्न रहे होंग य भेद-भाष सब किल्बिष
 जीवन शतदल के स्वर्णिम पत्रों सा विकसित
 भाशा ठज्वल मुक्त स्वण किरणों सी विस्तृत
 होते होंगे पावन ठर में स्वगिक गुजन
 मुक्त सर्वथा मुक्त अगस्त-जीवन जन-जन-भन
 तव न प्रकपित होते होंगे चरण अखंडित
 करते होंग शूल-कंटकों को सम्मर्दित
 सर-सरिता उतुग शृग मुनसान विषय पर
 चरण प्रगति नाचता रही होगा पथ-मथ कर
 तव न शौंकत होंगे कूर निराशा स दग
 लता विटप, पशु, पुष्प-वनस्पति, पवन-भघ, खग
 हपित करत होंगे मानव का अतस्तल
 सहवासा प्राकृतिक मनुज घट कितना निश्चल ?
 रा पड़ता होगा घट किमी विहग क दुख पर
 मँडरात होंग अनजान करुण स्वर मुल पर
 करत होंग प्राणा को व्याकुल धिर उन्मन
 पावस क प्रिय मघ घूमते धन-धन उपवन
 होते होंग म्लान पुष्प-स्तिका सुरशा कर
 सहवामी की किमा प्रथम अनजान विदा पर
 बहता होगी प्रिया-विरह में मयन-त्रिवेणा
 ग्ययित हुई होगी तप रसग-शृग-मधुकर-श्रेणा
 करता होगा स्द म कोइ प्राणों का स्वर
 व-धन का अजाल नहीं होगा प्राणों पर
 मार नहीं होठा होगा तन भन जावन पर
 वरण, अरण, भू, सोम, वायु, नम सम अन-अन पर

आज वासनाओं से ही जीवन आकर्षित
 सीमा-हीन मनुज सीमा में बद्ध प्रहर्षित
 स्वाय-भावना ही अतस्तल में उद्वेष्टित
 मुक्त चिन्तना के पलकों में ज्योति बद्धोद्धित
 किल्विष के स्वर्णिल सपनों में उपा गातित
 अष्ट-भावना के अतर् का हाम न सामित
 विरवासी के लक्ष्मणों में तम का क्रन्दन
 कलह द्वेष के सप्त स्वरो में मत्सर स्पन्दन
 कहीं मूर्च्छना बना हुई है ईश्वर-चिन्तन
 निगुण के सून प्रदेश में कहीं पर्यटन
 मणि प्रेम की कहीं अलंकारों में गुफित
 मत-मतान्तरों की काराओं में गति प्रथित
 कला कल्पना, कविता, चित्रों में हृदिमता
 अपना ईष्या-द्वेष-स्वार्थ अपना ही ममता
 रजत स्वर्ण के मन-मौहक चक्रों में विरसृत
 आत्मा का सगोच सत्य, शिव, सुन्दर सुगरित
 आज नहीं रह गई कला में सृजनशालता
 भक्ति-भावना में व्यापकता मह्य-अलिप्ता
 एकाना रह गई मनुज का चिन्तन-वाणी
 पद-दक्षिता रह गई आज नारा कल्याणी
 उड़-उड़ कर नम को छू डालूँ चाह रहा नर
 एकपक्ष संतुलन हान गिरता पाता पर
 फिर भी नर ही भग्न भावना नहीं हारती
 कोटर में निरुपाय बद्ध नारा पुकारती
 मूर्ख्य नहीं रह गया आज नारा के स्वर का
 ज्ञान विभ्र हो गया उसे निज शक्ति प्रसर का
 भग्न हुई उर-वाणा के तारों में क्रन्दन
 विष धर को कुडिलियों के पाशों में चन्दन

एकादश सर्ग

आज नहीं नारी को हँसने की स्वतंत्रता
 उष्य विचार विमर्शों में भी है न मन्त्रवा
 खेल-कूद नर्तन-गायन, खंचलता सपना
 पराधीन है कोई भी रह गया न अपना
 चेरी, बौंदी आज हुई घरों की दासी
 विषया घेर्या कुलटा, खल माया, कुल नाशो
 आज घनादा गई वासना का वह गुड़िया
 काम-वासना उच्चजित करने का गुड़िया

विहँसो विहँसो, ज्योति हासिनी !
 पत्नी, जननी दुहित, मगिनी
 चिर सपीडित ह उदासिनी !

सम का विस्तृत कलुपित अचल
 प्राणों पर छा रहा अघचल
 अधकारमय भवर तल थल
 प्रमा-रश्मि मर हो विलासिनी !

‘इति, अथ, उत्तरतम, पथ पर भी तम
 आज गया सम प्राणों में रम
 चिन्तन में कृष्णांचल दुगम
 ज्योति विखेरा ह प्रकाशिनी !
 विहँसो, विहँसो ज्योतिहासिना !

प्राणों का स्वर चिर दापित हो
 चित्तन का दातदल विक्रमित हो
 जीवन का न पथ कलुपित हो
 विमासिनी ष्वर्य-राशिना !

हो अतर में स्पणिल गुवन
 ध्वान्त बलान्त हो अमृत मंथन
 शान्त करो अग जग का क्रदन
 शिव-सुन्दर-सत्य-सुमापिना !

मीरा

मरे तो गिरधर गापाल, न कोई वृजा
मरे व आराध्य, करूँगा उनका पूजा
चाह यधु सग परिनन स होऊँ वंचित
मिथ्या ममता किंचित् भी न करूँगी सचित

आती आती हूँ पल प्रतिपल मैं अविरल ही पास तुम्हारे
कमा-कमी जब मैं करती हूँ एकाकी एकान्त चिन्तना
ऊँचा उड़पा सो लगती हूँ शाय धरा होती अकिंचना
ज्यों अम्बर-तल में पतंग ऊँचा ही ऊँचा उड़ जाता है
नाचे आन की इच्छाएँ लुप्त नहीं यह मुझ पाता है
उस क्षण में मधु घवन निरत नव मधुकर का सकुण्ड वल्लियों
निम्न क रमणीय पुलिन, उपवन का मञ्जुल कुसुम-केलियाँ
हाती जग की भविल वस्तुएँ य प्रनीत नारस नगण्य सा
अधिक कहूँ क्या, घटल-बहल यह दिव्यलाई पदवी अरण्य सी
यद्यपि त्रिविध समीर-हास में सा दता हूँ कमा चेतना
अस्त-व्यस्त मैं हो जाती हूँ पर फिर भी किंचित् न वेदना
पथ पर कितन हा घरणों के आवागमन विह्व है अंकित
मैं सशय मैं पड़ गाना हूँ कमी-कमा हा उगता शक्ति
फिर भा मरा प्रगति न रकती मरा पय संतम्य सुविस्तृत
भ्रम अमृत की लिय पिपासा वाणा हो उठती है शून्य
रून्य बालुका का लघु कणिका उड़ती तर एक सहारे
आता जाता हूँ पल प्रतिपल मैं अविरल हा पास तुम्हारे

मारों क चिन्तन में या स्थिरता अन्यपलता
दिग्य भावना सौम्य कामना, शिव निश्चलता
उल्लासों पर तर रदा या भावाकुल मन
तंत्रा क चंचल तारों पर गुमित गुजन

पल-हान कैप उड़ पाय ?

चण-मगुर तन, मशर जन है

अमर-शोक क पाम न मन है

एकादश सग

सोच-मोच पछा पछुताय
 परल हान कैसे उड़ पाये ?
 दर्शों दिशाएँ अधकार-भय
 भ्रम में जग क कण-कण छय
 पता न, दापरु कय बुझ जाय ?
 परल-हान कैसे उड़ पाय ?
 वृत्त न हो पाता अमिलापा
 बुद्-बुद् मा मिट जाता भाशा
 जावन निम्कर सा झर जाय
 परल हीन कैसे उड़ पाय ?
 जि-हें समझते है हम अपन
 शेष कहों रह पाठ सपन ?
 कौन कहाँ स आय, नाय ?
 परल-हान कैसे उड़ पाय ?
 जन्म-मृत्यु का छोर नहीं है
 जग का कोइ चार कहाँ ह
 रोज़ लिया, पर सफल न आय
 परल-हान कम उड़ पाय ?
 कवि रहस्य की ओर प्रवाहित
 चित्रकार सु-दरता-प्लावित
 गायक गा-गा कर रह पाय
 परल-हान कैसे उड़ पाय ?



द्वादश सर्ग

★

भावों की सरिता में दूधी
से शान्त हृदय में सुर मवान
यह पथ पर बढ़ता जाती थी
घारे धीरे सुध - सुध विहान
भंरुत, चल तारों पर नतन
करता थीं भंगुलियों प्रवीण
गायन लय में मूला राया
या प्रतिपल यह घाणा पुराण
मम भोर लग ये हग नारय
यह कान कह, क्या रह दस ?
पर डर में उठन भावों का
भक्ति था उनमें स्पष्ट लख
पद-पद कर था नम शून्य मौन
गायिका-रगों की भाँति शान्त
टिमटिमा रह दो हग तार
ज्योतिर्विहान ये विवग, भ्रान्त

झिलमिला रही थी कसक मूक
 छाया या आगे अघकार
 दो नयन इधर, दो नयन उधर
 चारों घूमिल, चिन्तित अपार

 गा रहा शून्य, सुन रहा शून्य
 दोनों बसुध चेतना हान
 सगात शून्य में से उठ कर
 हो रहा शून्य में या विछान

 परित व्यापा निमल, चल
 सगात लहरियों में प्रवाह
 जिनमें हूष, ये तैर रह
 उठत मितते बुद्-बुद् अयाह

 लड़, शून्य काष्ठ को वीणा में
 अतहित अमृत मधुर नाद
 या शून्य, अचतन तारों में
 मूल अतात का मधुर याद

 ऊँच, भाष सुन्दर टोल
 थी विष्ठी स्वण सी पात भूष
 कुछ भा मिसका या दीप्त रहा
 उस पार क्षितिज तक नहीं बूल

 पाद क पय पर या अकित
 मंथर चरणों की सुपड़ छाप
 या झलक रहा अभिराम धृषक
 जिनका अपना अस्त्रित्व भाष

 करती या मधु ध्वनि का प्रसार
 मंथर-गति गायन निरग वात
 चरणों में सतत बिखर रहा
 थी इधर उधर मे टुक पात

मीरी

यद्यपि वे थे अति शुष्क पात
 पर उनमें था शुचि भरा स्नह
 था पर चिन्हों पर लोभ रहा
 वह धृष्टा स बसुध अदह
 मधर-मंथर लय में भूल
 रज-कण करते थे नृत्य भूक
 संभव है उनके उर में भी
 काई अतीत की रहा हूक
 य यत्र तत्र सुध-सुध विहीन
 गायक वाणा क भास-पास
 मन्थर-मन्थर पर जम
 गापियों कर रहीं विकल रास
 सब धूलि-कणों का शुष्क शून्य
 मानत, समस्त निषिवाद्
 पर मिथ्या यह आता उनका
 सगात-नृत्य में सत्ता स्वाद्
 गायक वाणा क करण गात
 टीक्ष्ण सुनत थे धन मौन
 उनकी सुधि में आ बैठा था
 जान नीरव अज्ञात कौन ?
 सिर धुनते थे सब हृधर-उधर
 दूरस्थ विटप गायन विमोर
 आकुल, अज्ञात, नारव रज में
 मिल रहा निरंतर नश्य बोर
 वह रहा निरंतर था अपार
 अज्ञात दिशा में स्मरण-घात
 उसका वह कल-कल प्रतिपल था
 कर रहा ध्यया का भोतप्रात

द्वादश सर्ग

गायक-वाणा स्वर-शैली पर
 विपथर का ज्यों ये रह टाल
 उन्मत्त मौन, मोरव ये सब
 क्या पीपल, क्या घट, क्या करील ?
 म्यावर क उर में भा ला दे
 ओ सतत म्यया, करुगा, बिपाद
 वह धन्य धन्य, सौ बार धन्य
 गायक-वाणा का मधुर भाद
 मय छोड़ रह ये विहग नीड़
 भपन मन में ह्य विविध भाव
 उनके गायक पर गढ़ नयन
 प्रकृति करत थे ह्य प्रभाव
 गायक का हा धवा कयल
 उनक मुग-मुख पर था अशप
 ध मूल रह थे उड्डायन
 कुकुम नम तरुना निनिनेप
 कितन हा नूतन विहगों का
 कितना हा धुनियों मूल चूक
 भपन गातों में शत हुह
 ह्य में सोरर वे धन मूक
 गुन गुना रह थे गायन का
 कितन हा राग ह्य में विमार
 था धून धान, नूतन हलचल
 गुजित था धन का भोर छार
 ध अलस नयन, तत्र मुगल दायन
 विस्मृत स रवि भा पद जाग
 नम म भपन ह्य मूल लिय
 गमा था श्रिय वह मधुर राग

मीरा

स्वर्णाचल से क्षणमात्र शौंक
 गायक पर दीं फिरसें बिलेर
 मदन विस्मय सं रवि देखा
 सोचा यह कौन अपर कुवेर ?
 रवि में सब की था अद्वा पर
 आश्रय हुआ यह और दल
 गायक न उन पर नहीं ध्यान
 कुछ दिया नहीं उल्लास-रेख
 यह पूवमौंति था उसका पस
 अपन गायन में ध्यान एक
 रज में बिलेरी थीं इधर उधर
 दिनकर का स्वर्ण किरण अनक
 पीछ पाछ चलते जाते
 ये हरिण-शृंगती सुग्ध, मौन
 ये मल रह ये शौकद्विर्पा
 कुछ जात न था हम कहाँ, कौन ?
 मानर हस्तग्रा गूँज रही
 पर बाहर तंत्री और गात
 फिर मा अनुगामा था पाहर
 मानर का यह विपरीत रीत
 अपन प्रति अवहलना निरख
 गायक पर रवि को हुआ क्रोध
 ये मल गय मानापमान
 सद्भाव शान्ति व्यवहार-बोध
 स्वर्णाचल स झौंकना छाड़
 चढ़ भाव सिर पर अशुमान
 वादन-तन्मयता मग हुई
 दूटा उसका यह गात ध्यान

ज्यों हा ऊपर देखा तो रवि
 जलते थे भाषण लिय ताप
 यह अपन ऊपर खीम ऊठी
 मारौं पछताई स्वय भाष
 थ कठ शुष्क लग रहा प्यास
 था स्वेद स्राव सतस गात
 था कान्त मनारम स्वण काल
 खा चुका शूय में स्वप्नमात्र
 गुजन में खोइ थी घाणा
 पर अथ उसमें गुजन विलान
 भग जग चित्ताकपिका स्वय
 थी मृष्ण स सुध-सुध विहान
 उसक धूम लोचन अपलक
 जल का आशा में समा ओर
 लौट निराग मारव हा पर
 जल पा न सक थ किमा टौर
 हौं, पइ दिखाइ वृष सधन
 टालों स कुछ हा दूर पास
 ह वहाँ गाँव काई अथश्य
 यह साध शान्ति, कुछ हुई आरा

 मन की विह्वलता और पदा
 दग बड़ धूस थी दुनिदार
 ऊपर नाच भक्तगारा
 पदतारा था मन में विचार,
 गायन पादन में निष्फल हा
 मैन खाया निद्र स्वण-काल
 मन क पाङ्क्ति प्रागण में पर
 पैला सहसा यह तर्क जाल

मीरी

पथ चिन्ता विस्मृत करत हो
 गायन, पादन का लिया व्याज
 पर भ्रू गढ़े कण धात गय
 निस्पद धायु, आतप-स्वराज
 गायक जो, उसमें भावुकता
 का हाना है यह निविषाद
 तिस पर भा वह गायक, जिसक
 जीवन में कवल हा विषाद
 गहरा भावुकता हागा हा
 वह इसालिय बह गड बुर
 पर नाच-नाच कर आखिर ता
 चरणों पर रा दता मयूर
 भाग भाइ तो दीख पदा
 विस्मृत घट नीच एक कृप
 छाया में टंढक सान्नी थी
 हारा थी तिसस कड़ा भूप
 चपलता तान नयनों में
 कण-कण में यावन का उफान
 कटि गति में नतन परिवर्तन
 मधु लिय उरारों में वितान
 पद्माष्टक, भूषण मंहुत
 नुग घन में विद्युत्-सी रखा
 जल भरता अमिनच युवगा का
 हत प्रम नारर उसन दगा
 यह भा दला काई राहा
 सतापित प्यासा ह भयाह
 पाता पाम क लिय कृप
 क पाम सदा है पाह राह

द्वादश सर्ग

कह रहा पथिक था युवता स
 धिनती से, मृदु स्वर में विनीत
 अति प्यासा हूँ जल पीऊँगा
 यह शीत स्थान सघमुच पुनात
 पग धरने को भी नहीं स्थान
 सवत्र बरस है रही भाग
 जल पाने की अभिलाष लिख
 जल घट को देखा सानुराग
 तुम कहते हा सो ठीक पथिक ?
 युवता बोली यह सामिमान
 तुम नीच जन काल कुरूप
 मैं नहीं करूँगी नीर दान
 मानस में धक्का लगा एक
 खोया चिन्तन खो गय तार
 भावरण हटा निसक नाथ
 प्यास की तृष्णा का उमार
 बुझ गया एक हा शौंके म
 चित्तन का क्षीपित दिव्य दाप
 उत्ताल तरंगों पर था वह
 काई भी था न कहीं प्रतीप
 स्थिर रह न सकी सपना टूटा
 हो गया स्वयं वास्तविक ज्ञान
 मिछ गया लम्ब्य जैस पथ पर
 बढ गय चरण घचल अज्ञान
 घट का दागा पर छाया में
 थे दग रह थ मयूर
 मानो उनक दग कहत थ
 युपता, मग इगना दना मूर !

क्रीचड़ न उठ कर द्रवगति म
 उस राहा पर प्रामाण इमान
 कव भरटा मौका गात हुआ
 उमका कुछ भी था नहीं ध्यान
 उम घट का शाल्ल छाया में
 धठ, झटे प्रामाण ढार
 चित्रित स मान यन अपलक
 यस दख रह य उसा भार
 टग यद नहा चहर भाया
 यह नाचा जन, काला, कुरूप
 मूर्च्छित हाकर गिर पड़ा वहीं
 सचमुच भाषण था ज्यष्ठ धूप
 अन्तर्गत पास का बदला म
 क्षण भर रवि भा जा हुप भाग
 चिर तस शून्य अवर का भा
 क्षणमात्र दका चिर नित्य भाग
 पर उस सुना मारो क थी
 सून मानस में मूक दाह
 नम सी विस्तृत, गिरि सा महान्
 प्लावन क सागर सा भयाह
 क्या नदी मनुज य नाच जन
 मादय हान, काल कुरूप ?
 सूनी मारो था सुनारन
 सून सून बर भार पूर
 टग सुलन पर दसा उमन
 यर ह धारो भार लाग
 चित्रित अन्त उम अपन
 प्रियजन का हाता हा त्रिधाग

अज्ञात किमा क आधय में
शय्या पर बह है रहा लट
उस बट का नातल छाया में
बाला बह शक्ति तरा समट

कप आ गया ? कहाँ हूँ मैं ?
क्यों एकत्रित यह जन-ममूह ?
क्यों पवन यजन स करते हैं ?
उर में प्रस्ता का चक-न्यूह
मैं नहीं जानता कौन कहाँ
जाने थे तुम, क्या नाम धाम ?
कधल हतमा हा शात मुझ
दापहरा था, था रुद्रा घाम
मैं दूर इधर हा भाता थी
जग रहा चिन्ता मा तप्त धूल
तुम प्यामे थे तल निला नहीं
जीवन का सुरदा गया फूल
मैं दादा यहाँ उठा लाया
उपचार किया श्रद्धानुमार
तुम गक हा गय हप मुझ
अब चढ़ न मरगा पाप भार
उम भर प्रभु गिरघर नागर
न रग छः सपका आज लाज
कह कर ऊपर मंकन किया
मुल पर संतोष रहा विरान
निश्चाम लिया फिर वाला यह
मरने का था बस एक चाह
पूरा मैं हुई अर्था न किया
फिर जावन द कर मुझ आह !

मीरों

पादाएँ करवट छती थीं
 नम तक फँसी थी लपट लोल
 हा रहा समा कुठ था स्वाहा
 रमृतियों हा कवल रहा डोल
 नारवता करत हुण भग
 याला उन्मन मारों उदार
 तुम मूल रह हा ब्यधित जाव
 याणा में पूरित या दुलार
 सुग्य नहीं धरा ह मरन में
 यह जीवन भी है सत्य एक
 ह युद्ध महा जावन सारा
 दुख बाधाण भाती भनरु
 दुख बाधाओं से घबड़ा कर
 तुम मरने को कन्वियद आज
 पर, जरा शांति से सोचा तो
 ह मूल सत्य या सत्य ब्याज ?
 निज स्वस्थ क्राड शिशु का तज जो
 चाहा करत उदरस्थ याल
 बे पायल है कवल उनका
 है भधरार से मरा माल
 जावन से विमुक्त भागना हा
 ता मृत्यु नरक वम यहा पाप
 ना यहाँ क्रिया करत मरन
 व भाग भा करत विलाप
 दुग्य हा दुख कवल नहीं यहाँ
 मुग्य भी ह दुख क हा समान
 यदि एक अन्धि सा विस्तृत तो
 दूमरा दिमाघल सा महान्

द्वादश सर्ग

मुख दुःख का सम्मिधण जावन
 मुख का प्रभात, दुख का विराम
 द्वाया प्रकाश प्राकृतिक सत्य
 वा सत्य, वहा है शिव, कलाम
 अविराम सत्य का ग्रहण धम
 मत् म थढ़ कर कुड़ नहीं काय
 नम फट धँन घरता चाह
 पर सत्य नहीं छोड़त भाय
 जवन मुख-दुःख में एत एक
 तुम का जग का कुड़ नहीं ध्यान
 क्या कमा जरा साचा यह भा
 प्राण अस्तव्य पादित महान्
 दुख जल करे उरमग प्राण
 क्या जावन का दस यहा ध्यय ?
 पतग्रह का पत्र-दान तरु क्या
 समझा करता निज प्राण हय ?
 दुःख में नारसता स्वानाविक
 पर प्राण एक निमित्त मात्र
 वह स्वयं नहीं करता कवल
 साधन ह टमका नहीं गात्र
 उम प्रभु का ग्याती भग जग में !
 जिनन यह एणित दिया गरर
 अमृत प्रकाश का प्राप्त करा !
 जग का भा बाँटा निमिर धार
 मुख ही मुख मुमका निम मग
 तुमन माया बलि स्वयं भार
 जगता क शुद्ध सत्य म दृट
 तम में खाय कर लिया पाप

मुख दुख जितना हो, प्रहण करा
 गाभा गिरधर के सतत गान !
 जो होना ह, यह हागा हा
 नागर का पूसा हा विधान
 साधन टहरे हम ता अपन
 यत्र मरना जाना नहीं हाथ
 तो क्यों रायें ? क्यों हों निराश ?
 क्यों रहें न प्रभु क साथ-साथ ?
 नद या चेतन संकत विना
 प्रभु क तज सकत नहीं प्राण
 उसका इच्छा क विना पण
 भा दिल नहीं, पाय न प्राण
 दुख पात इसका हतु एक
 मानस में निमल नहीं रयाग
 क्षपन हा गायन में उल्लभे
 सुनते न सत्य का कर्मी राग
 यदि निज मुख दुख स ऊपर उर
 गायन पर कभा करें विचार
 ता नाच उठगा कण कण में
 जग क्षण परिवर्तित जगत्-सार
 दुख हा उन्नति का मूल म्यात
 दुख में क्यों साहस रह भूल ?
 हैसत जग का मारम दत
 कर्तों में ही गा सदा फूल ?
 पथ पर कटक भात हा है
 तम में ही ज्यत सदा दाव
 दिन-रात निरन्तर मटक मटक
 पाया ह मुच्छा कभा साथ

जीवन है शुचि सरिता बहता
 सरिता का ध्यय गमन गतिमय
 ठर्यान पतन में सम अभिनय
 अमिराम, सरल, विस्तृत उर में
 रहें भगणित उठती रहती
 जीवन है शुचि सरिता बहती
 पथ कर दता ऊबड़ खावड़
 ककण घटाने पथ में पढ़
 स्वाधान, विमल, पकिल उर में
 फिर भी नव तान छिड़ा रहती
 जीवन है शुचि सरिता बहती
 पल प्रतिपल गकर पर टोकर
 लासा गतों में पढ़-पढ़ कर
 कल-कल स अग-जग का फिर भा
 भरता सध कुछ सहता सहता
 जीवन है शुचि सरिता बहता
 दुरमया नहीं आनदमयी
 है सृष्टि नहा सुग्य विना बज्ज
 मारी न दरग दृष्टि डाल
 नम ताक रहा यह निर्निमप
 मरना हा है ता यों न मरो !
 सुम नजा जगत् क लिय प्राग !
 निमस यह जावन सफल रह
 युग-युग तक पत्र कानि घ्राण
 भावों में था उपात-वपन
 मय बाले सुनते रह मूक
 मय नारव धे ग्याय ग्याय
 मानस स दूर हुई न हूक

मीराँ

सबक मानस में विस्मय था
 गढ़ रह उसी पर समा नेत्र
 नारवता न सबक उर में
 करणा का था कर दिया छेत्र
 करणालय उर के घरणालय
 में लहरी उठती थी उरमुक थे
 परिषय पान का उरमुक थे
 चिर अपलक हग नीरघ नितान्त
 अपरिचित एक उनमें स हा
 धाला काई पौष्टन स्वेद
 जिपामा ह तुम कहा शुभ !
 परिचय क्या ह ? क्या कया भद्र ?
 यका पर उसक हग घूम
 यह शुष्क-कठ घह शुष्क प्राण
 कुद् हुद् वालन को उद्यन
 अनि विषण, मोठ ज्यों विद्-वाण
 नि श्याम बाध निकला बाण
 अपनपन का भा था न बाध
 मानुसता पैला इयथा-लान
 नारवता म म किया विरोध
 बुद्-बुद् का कैसा परिषय ?
 जग क अनन्त निम्नर में
 जिन अभिनव चल लहरों न
 अनि घूम मचाया प्रतिपक्ष
 मतन कर कान कान
 अविरल ककन चहाने
 कितना हा पय में आइ
 प्रणमर बुल किन्तु जरा भा
 जिनका ध राठ न पाइ

द्वादश सग

वे लहरें आज कहाँ हैं
कह सकता है क्या कोई ?
वह मत्तन आज कहाँ है
घतला सकता क्या कोई

फिर मैं तो क्षण भर नीरव
कुछ मौन करूँगी अमिनय
धुन्दुद् का कैसा परिचय ?

उरसुकता कुछ कम हो न सका
परिचय मैं था गमीर ऊह
आकर्षित अति उस ओर हुआ
जिसस विस्मित घट जन समूह

उनमें स कोई यों बाला
यह परिचय तो सबका समान
सब ही जग निर्भर क धुन्दुद्
सब क्षण-भगुर सब नाशमान

दानिक नहीं, यास्तविक बना
छाँड़ा यह अपना प्रह्य ज्ञान
क्यों धर कर रहा व्यर्थ यहिन !
थाका फिर थाणा गान-तान

मिल लिखा पढ़ा अपरिचित पुन्य
वह यों कह सब हैंस पढ़ लोग
सबका मन हलका, दूर हुआ
नारयता का अति शून्य राग

पर वह कुछ भा हैंस सका नहीं
बन गई और भा गहन, शान्त
बाणा यह मारी था थाणा
नारव तन मन, रग शून्य शान्त

मीरों

परिचय हा तो परिचय तू में
 अमहाय दान, मैं निराधार
 मा, बाप ससुर पति स्वपत्नी का
 मैं पा न सका जी मर हुलार
 धन धान्य-स्थान पर यह लम्बी
 योणा कह दो या इस वीर
 जगल में मरा रत नहीं
 कोई न प्राम में ह निवाम
 कदन का सब मीरों' कहत
 'मीरों मङ्गलणा पूण नाम
 यस रह हगों में नम्हाल
 उनक तरणों में हा विराम
 कह कर यह नम सा मान हुइ
 सौधलिय की दुलहिन अनूप
 धितन था प्राम्यजनों का यह
 कितना सखा वास्तविक रूप ?
 नगरों में कितना कालादल ?
 रह गया घड़ी ता महा स्वाध
 मिथ्या गुण-गान धवण कर कर
 सब हात रहत ह कृत्याय
 कृत्रिमता में बस गया ए त
 कृत्रिम मन कृत्रिम रान-पान
 कृत्रिम चितन, सगात तान
 कृत्रिमता म मृतप्राय प्राण
 पावन प्रामों में भा अपना
 पगया ह्या - द्वेष - जाल
 डंभे-नाथ का भ्रम माव
 इनक चितन में निया हल

द्वादश सर्ग

निज्जन की नीरवता मुखरित
 सय हा विह्वल गद्गद् विशाल
 सुन रह भावना में यह कर
 मारों की गिरधर-गात-माल
 दग-कोरों म झर झर घषल
 गिरता था रज-तल म अशान्त
 दग सापा खाला होती थी
 गिल्ली थी मुक्ता सजल, कान्त
 प्रामाण समा हा करत थे
 अपन पर पश्चात्ताप भाप
 य साध रह थे यों मन में
 यह भद भाव ह महापाप
 सय जन क उरुवासों स हा
 हाता ह हपित सुखा ग्राम
 नीच-ऊँच का भद ध्यर्थ
 अपना-अपना सय करें काम
 गुण का ही पूजा आवश्यक
 जिसमें यादा गुण, यह प्रभान
 ग्वाया रहता रज में हाटक
 पट्पद व उर में मधुर गान
 यह शुद्ध प्राकृतिक सय, एक
 म करत है पकज निवास
 काश्यप कृमिज, काष्ठज पापक
 गुण क कारण पात विकास
 मारों की जय मारों का जय
 नम-शुभन करता था निनाद
 मारों हपित मा पछा गई
 हा गया दूर मरका विपाद

मीरों

एकत्रित जन सब चल गये
 रजना आई, दिन गया बान
 सब भूल गये थे बातों का
 पर पत्नी का था वहा रीत
 वह सोच रहा था जावन पर
 औलों क भाग था अतीत
 अबिराम निराशा मानस क
 मधु-स्वप्नों को थी रही जात
 जितना तम नम में पैला था
 उतना हा अन्तर् में अपार
 तम में तारों का ज्यों उर में
 स्मृतियाँ जलती थी दुनिवार
 जग लोया था मधु निद्रा में
 उर में खाई थी मधुर आस
 उसका सासों में दुख, पाड़ा
 जगती का साँसों में विलाम
 उसकी साँसों में आर निगा
 की साँसों में बस एक तान
 वह भा नारद, वह भा नारय
 जग का इसका था नहीं ध्यान
 वह नव युवती र वह मीरों
 दानों नारी दानों समान
 पर दोनों में किना अंतर ?
 दानों का अना गृध्र ध्यान
 वह भद्रमाय में मग्न हम
 पामर, कुरूप का एक ध्यान
 वह कर्णा का प्रतिमा जग क
 दुख सुख का उर में जिय तान

'पर, यह तो मेरा प्याज्या ह
 यह तो मरा हा दृष्टि-काण
 मैं अपने सुख-दुख क कारण
 कर रहा किसी को मुख्य, गौण
 मैं बुरी समझता ह्मील्लिण
 मुझ को कर सका न नारदान
 उसको अच्छा, पर यह तो ह
 सकाण बुद्धि का व्यथान
 मानव अपूण हूँ उसम ता
 श्रुतियों का होना सत्य, ठाक
 मुझमें भी कितना हा श्रुतियों
 मानव श्रुतियों का हा प्रतीक
 पर यह सधमुच फुस्सित हा ह
 जिसन न तृपित का दिया नार
 श्रुतियों न, वहाँ ता अधकार
 अभिमान मरा मिथ्या अधार
 यह मारों मानव नहीं, देव
 जिसन पादित स किया प्यार
 कितना उदार उसका याणा ।
 भव धड़ न सकागा पाप मार
 उसन मरत का जावन दे
 यों दितलाया कनस्प-शृण
 "हैसत, जग को सौरम दन
 कौंटों में हा ता सदा पूर
 उपयुक्त रह सत्कार और
 मया उसका कितना महान् ?
 अभिमान भहीं उस पर मा बुट
 स्वप्नों जैमी हा जग प्यान

इ संस्थितियों का दाम मनुच
 मचमुच स्थितियाँ हा ई महान्
 स्थितियों की धाराओं में हा
 बहते रहते हैं सब समान
 वह युवता जो कुछ कहती था
 पर वह भी तो है सत्य बात
 पामर, नाचा, हैं शूद्र, म्लच्छ
 म मचमुच ही अति-दृष्ट-गात
 वह भाग कर न सका पितन
 दुख व्यथित हृदय में जला भाग
 ज्वालाओं में पड़ धूम बना
 भाशाओं का अवशिष्ट भाग
 मीना पलकें नम भोर उगी
 फला था जग पर तिमिर घोर
 सब की सौमों में छूम घनन्
 सब हा थ निद्रा में विमार
 पर वह पकाका जाग रहा
 था अपन म हा उन्मत्त
 प्लावन का क्षुब्ध तरंगों पर
 मुध-मुध विहान ज्यों विरस मान
 वह उग चल पड़ा गग्य रिय
 मारो सा मया-गत महान्
 भपना मुग्ध-मुग्ध रह गया गौण
 जगता क हुस का क्रिय ध्यान
 वह युवता मा चिन्ता-नत थी
 अपन ऊपर या ठम म्
 नयनों भाग घट भार बूध
 था व्यथित पथिक अति छिय स्वन्द

द्वादश सग

दापहरी की घेला माँगा
जल में बोला पर सामिमान
नाच कुरूप को कमी नहीं
दूँगा जाओ ! मैं नीर-दान
वे शब्द हृदय में चुमत थे
मारों आँखों में रहा डोल
उसका वाणा धितन, सवा
तम क कपाट सय रह खाल
वह आत्म-लान था पर, उसमें
नग भर का चित्रित था स्वरूप
मारों क घत की आमा में
ददाप्यमान थी वह अनूप



त्रयोदश सर्ग

★

आगा का विस्तृत है दुकूल

विषयक अथवा में इरा मरा रहता जायन का विकष पूर
आगा रवि का या कनक-सूत्र गिसमें प्रथित क्षण ज्यों प्रयाल
पावन क कण-कण में अविकूल भरत नूतन उल्लाम माल
मुन्वान दिव्य तो धारिधि का चंचल फनाग्ग्वल सा तरंग
विमका अतर में लिय लिय उड़ता रहता इ मत्त भृग

आगा जायन का मुदय मूल

कर आगा का आवरण छिन्न

जब प्रयाल निराशा मँहराती अपिरल छ अपना दशा मिन्न
तत्र दान गल सपों क म फन गीधन पर करत इ प्रहार
धारों धानों म जग पकृत सूमातिसूम्मतम भा विकार
चिन्ताण अथवा पलाती जम रजना में अघकार
एदों में जगमग हा उटना जायन का माया निराधार

जायन हा जाना गिन्न विन्न

मिल पाता कोई नहीं बूल

झाँकों में यों उठती, गिरती कम्माओं में ज्यों सूखम तूड
यों इधर-उधर स उधर-इधर हो हो उठता हं महा आत
एहरों के तीव्र थपड़ों से जीवन-नीका जत्र महा धात
तब ध्रुव तारे की ज्यों आशा करता जीवन का पथ प्रशस्त
पवमान, तिमिर आते जाते पर वह होता तथ मा न अस्त

तट पा जाती मौ बूल कूल

चिन्ता जीवन का है न ध्यय

चिन्तना हीन जीवन कहा न, जीवन में चिन्ता भी न हेय
इतना ही चिन्ता आवश्यक ना जीवन को दे गति अनन्त
मृगा न उचित जिसम सुन्दर जीवन कण रह जाय धृन्त
आशा भी और निराशा भा, पर दानों में आशा महान्
प्रतिपल आशा का स्वयं हस जीवन में भरता हं उड़ान

आगा क ही गुण गान गेय

आशा है किरणों का वितान

निम आर कूट पड़ती स्वर्णिम हो जाता स्वरित धड़ों विहान
पल-पल प्रतिपल विहगों क दल हो उगम कल्प में विलान
जग-राशि-रहरियों में घबल क्रीडा कर उगगा मनु मान
मधु हा मधु का सुम्बन चलता गायन गा उगम चघराक
पर प्रस्तर निरागा को रत्ना जिसकी गति का मगल न लाक

मैराश्य अमा का तिमिर गगन

पतझड़ का आता ग्लान काल

धल शास्त्रार्थ मुरझा जाती, पीला पड़ जाता पण पाल
ईल ही बत कर रह जाता थिटपी का आच्छादित शरार
हर लता कोई दरा मरा सुन्दर, मंजुल अमिराम और
सुपचाप शूभ्य में लो जाता थिटपा का वह क्षेमर सुत्तान्त
पिर मा आगा प्लावित अतरू विर्याम प्रचरित इदय प्रान्त

आगा की टिप्प नहीं गणाक

गिर पड़त पत्ते टूट टूट

अमिराम सरस जीवन उनका अंधड़ मुस्काता लूट-लूट
कर उखे थे ममर-ममर चरणों क नीचे शुक्र प्राण
कटक-शूलों में जा कैसते जावन-आशा में रुक प्राण
ब धुन्त-पतित, वे शूल-प्रथित पर फिर भी कब अस्तित्व-हास ?
दगमग-दगमग नम निराधार, इस पर मा आशा का प्रकाश

आगा अमृत की मधुर घूँट

हा आवा शाला में विधान

अकुर में अकुर निकल निकल तर होता बैसा हा महान
गायन गात विहगी विहंग नादों में अग्नेजी भयान
पल्लव-अंतर में धाकड़ियाँ भरता अरुणोदय का प्रकाश
तर-पर समृद्धि का यह रहस्य दाता न कमा यह कुछ उदाम
बाधाएँ आतीं पर सहता होता न व्यथाओं स निराग
ह व्यथा निरागा गरल पान

विटपी का पणों का न शाक

रुग भी हो ता, पाल नीरस, पत्तों को मकना कान राक ?
य झड़ते हैं, वे पड़त है होता यह सब नियमानुसूत
मिठी क बनत पण आर पणों का अतिम साँस धूल
समृति क फिर परिवर्तन पर रा पड़ना जावन का न लक्ष्य
जग स्वयं आर उपकरण समा उस महा काल के प्राप्त मध्य
जीवन-कुटार का ताव नाक

विटपी में पण न सब समान

पर सबक अंतर में विस्तृत विटपी क थे शाश्वत प्रदान
काई गीला, काह पाला, पर सब विटपी क जन्म-जात
सब पर समान सप्या प्रमाण, सब पर हा बहती मलय वात
सब अपनी-अपना परिन्धिनि स झड़त-बढ़त, यह निर्विषाद
चित्तन हा स उदतामरग जात चित्तन हा स विषाद
संगुति का पता हा विधान

त्रयोन्श सर्ग

तर को होता तब दुग्ग महान

जब हर भरे पणों क हा अधड़ लता है चुरा प्राण
तब उसका ऋद्धन आर्तनाद नम में खोता ह बार-बार
उस समय हुआ करता उसका दयनाय व्यथा पुरित पुकार
उसका श्रापणें और मूल हा उठते हैं कतव्य मूढ़
पाड़ा, विपदा, ऋद्धन, दुग्ग में कोई प्रच्छन्न रहस्य गूढ़

जावन में करु व्यथा महान

तर क चृन्नों का आरम-व्याग

मिट्टी में मिलकर हैंस पड़ता, इसका है कवल हेतु राग
सूक्ष्माति-सूक्ष्मतम अक्षुर में अकित स्वरूप तर का विराट्
जावन अँगड़ाई ल उगता धरती क मय स्तर छेद, काट
उसको न राक पाता पृथ्वी उमको न सका जमा मरोड़
वह धार घनाओं म न गला यों वप हुप लारों, करोड़

वह छिपा न तपकर दूर भाग

भातप आता भीषण ज्वलत

मू फा कण कग जल चल उगता अक्षर में हाते घण दुरन्त
प्रस्तर जलत, हिलत न विटप नीरमता का साम्राज्य शुष्क
दावानल सी लपटें उगता चलता समार ता महा रुष्क
सारा ससृति चल-भुन जाता पर भीषण फिर मा सरस शान्त
इसका गति रक पाता न कभा लपटों का कुद्ग न प्रभाव शान्त

जावन अनादि जावन अनन्त

भातप जाता ल शुष्क ध्यान

सूता विन्तन सूच तन मन प्रतिपल बगार कर शुष्क पान
पगता का शुष्क धमनियों में हाता नायन-संधार मार
पूजों का बुद्धर शय्या पर रिमक्षिम का हाता मधु विहार
परियों का मा संकुल मका जगता कर्णिकाओं का अमद
सारम की चलनाओं में ना जावन हाता ह महीं धर

जीवन क विन्तन हैं प्रगान

पावम आता है लिये गान

जीवन में जीवन जा भर भर मिल मिल उठन हैं प्राण प्राण
अनुकूल वायु-मण्डल में हा जीवन का हाता है विकास
स्वार्थीन मुक्त नाकावर में हा लग सता है शान्ति श्वास
मत्ताप, दार्ति आवश्यक है, जीवन के लिये स्वयं-काल
जल पूष घिरतन मर में हा विकसित होता है कमल-नाल

स्थितियों हा उन्नति का प्रिमान

गिरत जब शर-शर उपल-खंड

हम हैस पड़ता तब ध्यस, नाग नाचना हिमानी हा प्रघट
उल्का-पानी के तोंदव स धरा उगता घरणी विशाल
काल जल्दों का अन्धकार इकता जग का आवरण डाल
उम महानाश का यज्ञ में मा जीवन का रक्ता न गान
जीवन भागा का वाणा पर हाता न द्विध यह प्रगति तान

जीवन का सूत्र भर, भरड

बह-बह जाता है भार शुद्ध

घटानों का कर्कश शरार करता है धारधार रूढ़
पथ राक खड़ा हा जाता है दुधप प्रस्तरों का तमाव
उत्सुग शिखर प्राकारों का भाग दौंघे वापें प्रभाव
जल धारा के रूढ़ न धरण, उसका बया हा ताद्व दग
घटानों में यों घुल जाता गया महामर में प्रसर लग

जीवन है एक महान् युद्ध

जल्दों में हैमता तद्रित्-नृत्य

हात रहत दिग्मन्त्र में कात जल्दों के कृष्ण कृष्ण
गाशाग्धकार के पाहु पाग धपना का जल है समट
उसके स्मित भानन का उगल देता है तम उल्लास भर
उम दण हाता यह ज्ञान ज्ञानि का दान याज्ञा, विनाश
पर तम का वचन द्विध द्विध धर हैम उगता है महाल्लास

जीवन में नव उल्लास सार

दूषा दल का दल घटमान

लघु-लघु स तिनकों का सचय, जो हरा भरा कोमल महान
कोमलता जीवन का सबल जिसमें मानवता प्रवहमान
भ्रमों के भी प्रलय-नृत्य ऊपर उड़ते ज्यों धायुधान
नित हरा-भरा हा रहता है कामलता का भमिराम मूल
आतप में भा न झुलस पाते उसके मजुल घिर-नवल फूल

गादल-जावन का हा वितान

अविरल घातक, दादुर मयूर

मजुल मधुमय स्वर में गात प्रिय दशों दिगा में दूर-दूर
उनका आकृतियों भाव प्रवण जो लाकोत्तर-आनन्द-ज्ञान
जिनमें न हप की सामाएँ अविराम प्रवाहित जग-जनान
आनन्दमया हा अखिल सृष्टि जीवन मा यह आनन्द पून
आनन्द-ज्ञान होता भातिर हाकर आनन्द प्रसूत भूत

जावन वह जा आनन्द-यूर

सर में उठता है लहर लाल

बद-बद रह जाती हूँटा सा घबल तरंग प्रधियों राल
उद्वेलित हा उगता समस्त मावाकुल सा अविराम ताल
माना पावस का भ्रमों में गतिमय नाकाएँ विष-वाल
बला का धातावरण क्षुब्ध कर देता चावन को अगान्त
घबल लहरों की ज्यों नर्तित हातीं अभिलाषाण भ्रमन्त

धरती बूँटों पर डाल लाल

सर में उगता है पुदराक

जल में रह कर जल क ऊपर हा रहता यह द वात ठाक
परिस्थितियों क हा दल-दल में जावन का संवर्धित गुणाल
परिस्थितियों क ऊपर रह कर, पर रगता शादधत उष्य माल
कर ग्रहण कीच का सार-तरप सौरम दता जग में विष
जग का मधुमय स्वर्णिल गुजन मेंदराता परित २१५१

उद्वल शिर जावन का प्रवाक

उगते ऊपा में अंशुमान

कमलों की कारा म विमुक्त हो जाते तरक्षण मधुप म्लान
जायन यह हा जिममें उचल तिनकर किरणों का सा प्रकाश
ईपत् स्मिति क हा दृगित पर होता यन्दा-बधन विनाश
अपम ही बधन में सीमित ना जीयन यह है नारकीय
व नहीं उच व शुद्ध, हीन, जिनक उर में परकीय स्वीय

जायन रवि की स्वणिम उद्गान

मधुपों का सतत सहस्र-नाद

मारज क स्तिन्न प्रसूनों कर दता दूर ध्या, विपा
व रिह रिह म पड़त छविमय गुजन-तन्मय आलाक-प्राप्त
उनक भानन की था सुन्दर होता न कभी किंचित् समाप्त
अगणित मगीतों का स्वरूप यह जायन जो जागवदपमान्
मृतप्राय विफल हा रहता ह हा जाता ह जब मग्न गान

जायन अनन्त का मधु निनाद

अब्र में उड़ते हैं विहग

चितिजों तक विस्तृत मुक्त ध्याम उर में मरता रहता उमग
यह भा क्या जायन जिसमें कुछ होवे न भावना का उद्गान ?
उन्माद राम रंगों का स्वर जिसमें मिथित कुकुम विहान
बधन की सामाँ उलँघ ऊँच-ऊँच स्तर पर प्रयाण
स्वाधान वात-भावरणों में हा विकसित हात सतत प्राण

बन्धन में होत स्वप्न मग

जब हा आगा ह निक मोड

अविराम ध्यान पय-श्लाम्ब पंख हैंस हैंस उरत, उड़त मत्राँइ
प्राणों में पुलकित चतनता करता निर्माण उबलन साक
उन्माम हाम की धा हरता जीवन क दुख विधाग्नि, गोक
कोटर क तिनक तिनक में जायन की घटनाँ अनन्त
साम्पूर्व मरित इतना जिसका कल्पना-शोक में भा न अन्त

कोटर जायन-भाषार राइ

शावक-कुल का श्रीदा विहार

सद की गतल सुरमित छाया कोटर क गदल मशुत्रार
 अपलक निहार सद कुछ विसार स्वग हा उछे भायुक विमोर
 अपन हर्षित उद्गारों से गुञ्जित कर दते आर धार
 ममता हा जावन का स्पन्द उसक अभाव में जग भमार
 रागात्मक बधन नैसर्गिक प्रथित जग भर के तार तार

ममता हा जावन का प्रकार

सध्या क अचल में अशान्त

जब लग कलरव गुञ्जित होता हतप्रम मा रहता ध्योम प्रान्त
 नम क अघरों का मृदु लाला हो जाता नारस सी उदास
 बाता क्षण बन मपना चिन्तन प्रस खता जावन का प्रकाश
 बात युग का स्वर्णिम बैभव जावन पर करता महा घात
 पणदा का गहरा अधकार सा छा जाता, हाता न प्रात

सस्मृतियों का शुधय ध्वान्त

सुनसान पथ में पथिक ध्रान्त

रवि-गति पर अपन लगा नयन हा जाता ह कनध्य-भ्रान्त
 उमक अतर का गति विधियों सध्या की धूम शिला समान
 मयर-मयर सा उदासान पाता न गान्ति नैराश्य म्लान
 यह बढ़ता पर उसका गति में आगा का किंचित् अग-मात्र
 षकाकापन का परिस्थितियों सूना कर दती हृदय गात्र

मझघार शेष जावन दुरान्त

घर घर में जलत हैं प्रदाप

ध जिस जिस स्थल पर जलते हैं रह पाता नहीं तिमिर ममाप
 लु सा दापक लघु-लघु तन-भन पर नहीं कमा नैराश्य-भाय
 जल जल कर आकाशिन करता परिस्थियों पर भवना प्रभाव
 जलत जाना हा साथक ह रश्मियों पुष्ट करने विवेक
 जड़ता क प्रांगण में अमिनय आमुता शक्ति करना अनक
 दापित जावन तम का प्रतीक

दापक से करता शलम स्नह

दापक क चिंतन में ही वे वृद्धते अपना स्वर्ण-देह
रहता कोई भा नहीं स्वाथ वे इतन हात हैं उदार
जावन का उच्छ बनाता है कालिमा-दान नि स्वाथ प्यार
अपन में भार पराय में तय रहता कुछ भा नहीं भद
दारण स दारण पाड़ा स भी होता ह कुछ नहीं खद

जीवन का निश्छल प्रणय गद

गहरा नम में नक्षत्र-जाल

झिल-मिल झिल-मिल करत रहत जैसे मालाओं क प्रवाल
द पात जग को कुछ न ज्योति यद्यपि विस्तृत हैं गुच्छ-गुच्छ
वे क्यल अपन में सामित, उनका मन, चिंतन, हृदय सुन्द
उनका जावन भाँदाय शून्य जावन उदारता स महान
आत्मा-विवृद्धि ही मुख्य हृदय-संकाषन अध पतन प्रधान

जावन रण में भाँदाय डाल

छाया रहता ह अधकार

सूने-मन स मनन मौन कुतु खोज न पात हार हार
बदन शकाकुल धरण स्मिन्नु यह ज्ञात न होता कान राह ?
हा रहता दीपाडाल ज्ञान, टोकर खगन पर भाह ! भाह !
सत्य क मनन का हृद् ग्रहरी यह अधकार का जान-घात
हमक आधार दिना होना सभव न ज्योति में आतघात

जीवन यह तम क नहीं पार

करते वे हा आलोक प्राप्त

जा अपन जावन क सब क्षण तम में कर त्त ट समाप्त
यदि तम न रहे तो यहाँ ज्योति का हाव ऊँह भा न माल
तम का अतिम सीमाओं स रहता प्रकाश का मल जाल
तम-बाधा पर वह हा सबल, उसक अन्तर में हा प्रकार
जावन का विस्तृत अधकार ही जावन में मरता विक्रम

निश्चय, जावन में निमिर आप्त

होता अविराम व्यतीत काल

क्षण-क्षण कर-कर पल पल हर कर दौड़ा भाता कोई कराल
 वह ध्रुवदृष्ट अपन तन में ल शत-शत दिग्गज अश्व-वग
 करता भाता है महाघाप ज्यों पावस निशि में कृष्ण मघ
 उसका जिह्वा में आकषण, जाते सय उस हा और भाग
 एसा काह अपपाद एक जिसका उसके प्रति ह विराग
 क्षण मुक्ता लुगता वह मराल

जीवन सम्मिश्रित दुग्ध नीर

इस नार क्षार का ज्ञान जिस वह हा पा सकता पुष्टि-तार
 प्रत्येक विन्दु में तप्य भरा वह तप्य कितु प्रच्छन्न, गूढ़
 पात व जा रसत विषक व सा द्य पा महा मूढ़
 जीवन क विस्तृत सागर में व हा कर सकत ह विहार
 प्रत्येक क्षणों का प्रतिफल का, जिनक अंतस्तल में विचार
 मसधार सूचत ह अधार
 उड़ता रहता ह सतत रत

विस्तृत असाम क अचल म अविरल चषल स्वच्छन्द चत
 वह मथर धायु जहरिया में परियों का सा करता विहार
 विरार पद्म निरार पद्म उसक भावों क मार धार
 बधन म उसक कठ रुद्र, वह सदा विचरता त्रिस-नात
 उलझन का कारा म नारस निष्फल बन जाता हृदय, गात
 उलझन म जावन बन प्रत

उत्तुग महान् नगाधिरान

जो धमुधा क पक्षस्थल पर नम के प्राणा तक रह राज
 शत-शत भगणित तरुपर तिनक रोमों का ज्यों हान प्रयात
 जिनक अचल में लक्ष काटि दिनचया जनु करें व्यतात
 व उन्नतनिर ऊँच नम में मघ मघों का सुनत निनाद
 दुन सुन स ऊँच स्तर ऊपर उन्न स हा जाता विपार
 उन्नति हा जीवन का जहान

जग में मुस्काना औबधास

नित अमृत की घषा करता, शतक हा रगता शुभ शास

हैंच नीच का कुछ न बाध सबका समान दता सुधोंग
घटते घटत कटत कटत तन क लुट जात अस्थि-भांस
होता जाता यह चाण किन्तु आता काई न कमी दुराव
जग-आद्यादित-कता जीवन ही रस पागा अपना प्रभाव

कलुपित पीवन ता एक टास

सध्या-सरमिञ्ज क भतरू का मुनसान द्वार
निग् दिगत क प्राकारपथ पर तिमिर-वार
कृष्णारग क काल मुस में जग निराधार
कुछ हा क्षण पूर्ष दिनावसान, अथ शन स्फार
जगमग जगमग पकाका मीरों का निवास
मारों क भतरू में द्विगुणित हर्षिताल्लाम
चिन्तन क महलु मावों का शतश विकाम
गुन-गुना रहा था गायन मुग पर शान्ति-भास

मुझका पथ दील रहा मरा

जग का क्या है, जग ता यों हा पथ में बाधाएँ लायगा
उरथान न हान दगा कुछ, पर पतन दल मुस्कायगा
कटक-नममय निपनपथ पर जग न क्य किस का साथ दिया ?
तूफानों क ताँटव में कव लोगों न किमको हाथ दिया ?
बदन धाल, रहन धाल दोनों का हा विपरात दिना
जग आरामा है पर सम है बदन का प्रात निशा
निस पर न तिमिर कटक ककड़ धन यिजनरह वह पथ कैमा ?
कवल छाकों-झाकों पर हा आ बद पाय, यह रथ कैमा ?
चरणों क पाद-पीछे हा क्या बदना बदन धालों का ?
परकाय करालधन लकर क्या बदना बदन धालों का ?
पथ है वह हा, जिस पर विपदाओं का रहता परित घरा

शुप ! शुप ! रहन दा बरू करा कल्पना भाय !
मुमन भर भतरू-तख में कर दिप घाय
मर्यानागिन भ्रष्टे पनित कुल्ल वश मार !
निर्मलता में आ गई कहीं न तू विचार !

त्रयोदश सर्ग

सन्तोष तमा होगा जब तेरे हरेँ प्राण
 गिरधर भा तरा कर न सकगा भाज प्राण
 मैं महाकाल जीवन करन वाला मनास
 रा में मिलन वाल हँ तर भाव व्यास
 अधड़ का ज्यों भाव दवर चुपचाप क्रुद्ध
 मारों बंस हा शान्त किन्तु निमय प्रबुद्ध
 मारों क त्यागिमय ऊपर उठ गय नग्न
 वे क्रोध प्रमत्त थे, काँप रह थे यथा क्षेत्र
 ज्यों ही मोरों का दृष्टि पड़ा भमिराम शान्त
 निश्छल निमल, निमय, दापित, स्वर्गाय, कान्त
 दवर हतप्रम, धी हान हुए, कतय भ्रान्त
 हिल उठा हगमगा गया, हृदय का पुष्ट प्रान्त
 कहत-कहत रक गय, अचानक हुए मूक
 चेतना गई कतव्य-भूढ़ ज्यों मूल-चूक
 ज्योतिर्मय मुख-मंडल न कपित किया ध्यान
 सुन्दर थी स्वर-लहरी, सुन्दर था प्रगति-गान
 गमीर हा गई थी जागृत था स्वामिमान
 दवर म वाला अनुचित यह भाषण विधान
 मैं समझ न पाया चाह रह क्या क्रुद्ध भाप ?
 पहल फह क्षत फिर कर मकन ध प्रसाप
 कुल-मर्यादा कर मग बन रहा हँ अजान
 भव सदा नहीं हागा मुझम यह व्यय ज्ञान
 धर्मों-कर्मों क ऊपर पानी दिया पर
 क्या दल रहा ह यों मुझका भाँलें तरर ?
 भर जीवन-आधार कृष्ण ह एकमात्र
 उसक हा मन चिंतन, भमिलयादा भार गात्र
 मदिरा क छाभा, आभा अपना करा काम ?
 रत हा बनने ध माणिक मुना धान्य, धाम !
 निस धैमय पर तुम मत्त बन हा, हा अधार
 उमका दुकराता हँ म, मरा दूर तार

मैं नारा हूँ स्वच्छन्द सवधा मुक्त पूत
 कर सकते क्या तुम मोस-सुरा के अपदूत ?
 नारा को तुम बन्दिनी बनाना रह चाह
 है धम तुम्हारा ठसकी पाड़ा, करण दाह
 पेस घमों कमों का होगा शीघ्र भाश
 देखो, सोचो अथ चेतो रे घासना दास !
 मिथ्या है कुल मयादा का दपाभिमान
 ऊँचा, नीचा चिन्तन प्राणी का व्यथ ज्ञान
 स्वार्थों का हा जजाल बन रहा है समान
 कुटिलों विश्वास घातियों का हो रहा राज
 कमा समाज यह जिसमें हाव भ्रूण पात ?
 नन्हें निशुभों के गोणित स भू रक्त स्नात
 दुष्पथित सर ह, घृण रह स्वच्छन्द दस
 कसा समाज, कैमी मयादा, कहाँ घन ?
 एम समाज, कुल पर करता मैं पदाघात
 कुल-मयादा, मूर्खों के मन का क्षुद्र घात
 प्रभु का कण-कण जग के जन-जन भरो समाज
 मैं नहां कृप-भद्रक न मृडा दारम, हात
 म गिरधर के रग राधुंगा
 अभिभाव शाप जय पाप ताप
 मैं दस रही हूँ पुण्य-पाप
 छोट लागों की क्षुद्र माप
 राकगा मुमका क्या विलाप ?
 र, इन भायरणों के भीतर
 अन्याय ह्मत्य टिया जजर
 पक्षी का मैमगिठ अवर
 जीवन का सत्य भहा पिंजर
 नतन मजीयता का संयल
 प्राचारों में गति गान विकल
 भागजुल है पग तल धवल
 गतिशास्त्र हयों पर मन निन्दक

शत्रु-हृगत मा विसेनण
 महला दत्ता जग-तल क प्रण
 है मूल्यवान् जावन क क्षण
 धरती जैसा है मरा प्रण
 कहते हो तुम मत नाचा पर
 मैं नाचूँगा मैं नाचूँगा
 मैं गिरधर क रँग नाचूँगा
 मैं आग लगाने आया हूँ
 मैं आग लगा कर जाऊँगी
 पलकें सपनों में हूँ रहों
 मधु माना विहँस रहा झलना
 आलोक-विभा क अघरों पर
 टुप्कर मा लगता ह चलना
 र जाग जगान भायी हूँ
 जग जाग ! जगाकर जाऊँगा
 मैं आग लगाने भाई हूँ
 मैं आग लगा कर जाऊँगा
 शास्त्रता क अतस्त्रल में
 उत्तर-भेदों का अट्टहाम
 सारम गतभा पशुदियों मृत
 आत्म-भागम, इगल दवाग
 मैं आग लगाने आया हूँ
 मैं आग लगा कर जाऊँगा
 मैं आग लगाने आया हूँ
 मैं आग लगा कर जाऊँगा
 अग्निमा-तरुणिमा अस्त्रगण
 उल्पर पिर पिर मिलून तिर-तिर
 उपातिनदिव मम का इविष्य
 गन-गान चिरंतन अचिर अत्रि

मीरा

तम भाग भगान आयी हूँ
 रे भाग भगा कर जाऊँगी
 मैं भाग लगाने भायी हूँ
 मैं भाग लगा कर जाऊँगी
 काई न रोकने वाला मीरों खली मग्न
 अमिराम, अलौकिक पावन आभा में निमग्न
 हत प्रभु निर्वाकू विमूढ़, काष्ठ सा स्थाणु, हान
 रह गया दरता हा दवर अनुभव नवीन
 पित्रु का सामा-कारा स सिंहनी मुक्त
 उसका दहाड़ स हुआ अधिप समीति-युक्त
 बहनवाली धारा का काई मका राक ?
 दरपारा था चुप गरज रहा जो ताल ठोंक
 ऊँचे ऊँचे गिरि-शृंग झोंकत रह प्याम
 भाश्रय चकित, विह्वल गद् गद् थ रोम राम
 त्रिमदल भू, आकाश, आप ज्यों गय काँप
 प्रामाद, महल कुंठित वैभव, ज्यों दस साँप
 पा गई नगर-दृश्याण हनु यह कालकूट
 टिक मका सरप क भाग किञ्चित् मो न मृद
 दुर्दान्त काल-सर्पों क रौरव कुटिल ईश
 ज्यातिर्जीवन का दल न पाय उग शश
 धरणाभन सम क्ष लिया धरा का पाप-नाप
 माएत् लहरों में फँस गया पावन प्रताप
 नतमस्तक धदा-भन में हुआ जन-ममूह
 मीरों की जय मीरों का जय मय चक्र ब्यूह
 पग घुँपद बाँध मीरों नाथा रै ?
 मैं तां अपने नारायण रा, आपह होगा दामी रै ?
 लाग रहै मीरों हुई बापछा मास कह कुलनामो रै ?
 पिय रा प्याला रागाज्ज भज्या पीती मीरों हौमी रै ?
 'मीरों रा प्रभु गिरधर नागर सहज मिथ्या अविनामी रै !



